तित्थयर

॥ जैन भवन ॥

वर्द्धमान महावीर माता त्रिशला की गोद में

वर्ष : २७ अंक : ९ दिसम्बर : २००३

ज्ञान से पदार्थों को जाना जाता है,
दर्शन से श्रद्धा होती है,
चारित्र से कमास्त्रव की रोक होती है,
और तप से शुद्धि होती है।

Sethia Oil Industries Ltd.

Manufacturers of De-oiled Rice Bran, Mustard Deoiled Cakes, Neem deoiled Powder, Ground-nut De-oiled Cakes, Mahua deoiled cakes etc. And Solvent Extracted Rice Bran Oil, Neem Oil, Mustard Oil etc.

Plant
Post Box No. 5
Lucknow Road
Sitapur - 261001 (U.P.)
Ph: 42017/42397/42073
(05862)
Gram - Sethia - Sitapur
Fax: 42790 (05862)

Registered Office
143, Cotton Street
Kol - 700 007
Ph: 238-4329/
8471/5738
Gram - Sethia Meal

Executive Office
2, India Exchange Place
Kolkata - 700 001
Ph: 2201001/9146/5055
Telex: 217149 SOIN IN
FAX: 2200248 (033)

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्रिका

वर्ष - २७ अंक - ९, दिसम्बर , २००३

लेख, पुस्तक समीक्षा तथा पत्रिका से सम्बन्धित पत्र व्यवहार के लिये
पता - Editor : Titthayar, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Phone : 2268-2655, e-mail : jbhawan@vsnl.net.in

विज्ञापन तथा सदस्यता के लिये कृपया सम्पर्क करें —
Secretary, Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Subscription for one year : Rs. 55.00, US$ 20.00,
for three years : Rs. 160.00, US$ 60.00,
Life Membership : India : Rs. 1000.00, Foreign : US$ 160.00

Published by Smt. Lata Bothra on behalf of Jain Bhawan from
P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone : 2268-2655
and Printed by her at Arunima Printing Works, 81, Simla Street
Kolkata - 700 007 Phone : 2241-1006

संपादन

श्रीमती लता बोथरा

॥ जैन भवन ॥

Jainology and Prakrit Research Institute

Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007.

Phone-2268-2655. e-mail - jbhawan@vsnl.net

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	लेख	लेखक	पृ. सं.
१.	अनेकान्त का व्यावहारिक पक्ष	प्रो. सागरमल जैन	४९१
२.	क्षमापना	श्रीमद् राजचन्द्रजी	५१०
३.	श्रीचन्दराज चरित्र		५१९

कवरपृष्ठ : स्वर्गीय हीराचन्द दुगड़ द्वारा चित्रित एवं श्री जयन्त दूगड़ के सहयोग से प्राप्त चित्र में भगवान् महावीर माता त्रिशला की गोद में।

Composed by:
Jain Bhawan Computer Centre, P-25, Kalakar Street Kolkata - 700 007

अनेकान्त का व्यावहारिक पक्ष

—प्रो. सागरमल जैन

अनेकान्त एक व्यावहारिक पद्धति

अनेकान्तवाद एक दार्शनिक सिद्धान्त होने की अपेक्षा दार्शनिक मन्तव्यों, मान्यताओं और स्थापनाओं को उनके सम्यक् परिप्रेक्ष्य में व्याख्यायित करने की पद्धति (Mathod) विशेष है। इस प्रकार अनेकान्तवाद का मूल प्रयोजन सत्य को उसके विभिन्न आयामों में देखने, समझने और समझाने का प्रयास करना है। अतः वह सत्य के खोज की एक व्यावहारिक पद्धति है, जो सत्ता (Reality) को उसके विविध आयामों में देखने का प्रयत्न करती है। दार्शनिक विधियां दो प्रकार की होती हैं - १. तार्किक या बौद्धिक और .२. आनुभविक। तार्किक विधि सैद्धान्तिक होती है, वह दार्शनिक स्थापनाओं में तार्किक संगति को देखती है। इसके विपरीत आनुभविक विधि सत्य को खोज तर्क की अपेक्षा आनुभविक संगति ही अधिक महत्वपूर्ण होती है। अनेकान्तवाद की विकास यात्रा इसी आनुभविक पद्धति के सहारे चलती है। उसका लक्ष्य 'सत्य' क्या है यह बताने की अपेक्षा सत्य कैसा अनुभूत होता है– यह बताना है। अनुभूतियां वैयाक्तिक होती हैं और इसीलिए अनुभूतियों के आधार पर निर्मित दर्शन भी विविध होते हैं। अनेकांत का कार्य उन सभी दर्शनों की सापेक्षित सत्यता को उजागर करके उनमें रहे हुए विरोधों को समाप्त करना है। इस प्रकार अनेकांत एक सिद्धान्त होने की अपेक्षा एक व्यावहारिक पद्धति ही अधिक है। यही कारण है कि अनेकान्तवाद को एक दार्शनिक सिद्धान्त के रूप में स्थापना करने वाले आचार्य सिद्धसेन दिवाकर (ई० चतुर्थ शती) को भी अनेकान्तवाद की इस व्यावहारिक महत्ता के आगे नतमस्तक होकर कहना पड़ा–

जेण विणा लोगस्स वि ववहारो सव्वहा ण णिव्वडइ।
तस्स भुवणेक्क गुरुणो णमो अणेगंतवायस्स।

सन्मति - तर्क - प्रकरण - ३/७०

अर्थात् जिसके बिना लोक-व्यवहार का निर्वहन भी सर्वथा सम्भव नहीं है, उस संसार के एक मात्र गुरु अनेकान्तवाद को नमस्कार है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अनेकान्तवाद एक व्यावहारिक दर्शन है। इसकी महत्ता उसकी व्यावहारिक उपयोगिता पर निर्भर है। उसका जन्म दार्शनिक विवादों के सर्जन के लिये नहीं अपितु उनके निराकरण के लिये हुआ है। दार्शनिक विवादों के बीच समन्वय के सूत्र खोजना ही अनेकान्तवाद की व्यावहारिक उपादेयता का प्रमाण है। अनेकान्तवाद का यह कार्य त्रिविध है–

१. प्रत्येक दार्शनिक अवधारणा के गुण-दोषों की समीक्षा करना और इस समीक्षा में यह देखने का प्रयत्न करना कि उसकी हमारे व्यावहारिक जीवन में क्या उपयोगिता है। जैसे बौद्ध दर्शन के क्षणिकवाद और अनात्मवाद की दार्शनिक अवधारणाएं कितनी आवश्यक एवं उपयोगी हैं।

२. प्रत्येक दार्शनिक अवधारणा की सापेक्षिक सत्यता को स्वीकार करना और यह निश्चित करना कि उसमें जो सत्यांश है, वह किसी अपेक्षा विशेष से है। जैसे यह बताना कि सत्ता की नित्यता की अवधारणा द्रव्य की अपेक्षा से अर्थात् द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से सत्य है और सत्ता की अनित्यता उसकी पर्याय की अपेक्षा से औचित्यपूर्ण है। इस प्रकार वह प्रत्येक दर्शन की सापेक्षित सत्यता को स्वीकार करता है और वह सापेक्षित सत्यता किस अपेक्षा से है, उसे भी स्पष्ट करता है।

३. अनेकान्तवाद का तीसरा महत्त्वपूर्ण उपयोगी कार्य विभिन्न एकांतिक मान्यताओं को समन्वय के सूत्र में पिरोकर उनके एकान्त रूपी दोष का निराकरण करते हुए उनके पारस्परिक विद्वेष का निराकरण कर उनमें सौहार्द और सौमनस्य स्थापित कर देना है। जिस प्रकार एक वैद्य किसी विष विशेष के दोषों की शुद्धि करके उसे औषधि बना देता है उसी प्रकार अनेकान्तवाद भी दर्शनों अथवा मान्यताओं के एकान्तरूपी विष का निराकरण करके उन्हे एक दूसरे का सहयोगी बना देता है। अनेकांतवाद के उक्त तीनों ही कार्य (Functions) उसकी व्यावहारिक उपादेयता को स्पष्ट कर देते हैं।

दर्शन का जन्म मानवीय जिज्ञासा से होता है। ईसा पूर्व छठी शती में मनुष्य की यह जिज्ञासा पर्याप्त रूप से प्रौढ़ हो चुकी थी। अनेक विचारक विश्व के रहस्योद्घाटन के लिए प्रयत्नशील थे। इन जिज्ञासु चिन्तकों के सामने अनेक समस्याएँ थीं, जैसे-इस दृश्यमान विश्व की उत्पत्ति कैसे हुई, इसका मूल कारण क्या है? वह मूल कारण या परमतत्व जड़ है या चेतन? पुनः यह जगत् सत् से उत्पन्न हुआ है या असत् से? यदि यह संसार सत् से उत्पन्न हुआ तो वह सत् या मूल तत्व एक है या अनेक। यदि यह संसार सत् से उत्पन्न हुआ तो वह सत् या मूल तत्त्व एक है या अनेक। यदि वह एक है तो वह पुरुष (ब्रह्म) है या पुरुषेतर (जड़तत्त्व) है, यदि पुरुषेतर है तो वह जल, वायु, अग्नि, आकाश आदि में से क्या है? पुनः यदि वह अनेक है तो वे अनेक तत्व कौन से हैं? पुनः यदि यह संसार सृष्ट है तो वह स्रष्टा कौन है? उसने जगत् की सृष्टि क्यों की और किससे की? इसके विपरीत यदि यह असृष्ट है तो क्या अनादि है? पुनः यदि यह अनादि है तो इसमें होने वाले उत्पाद, व्यय रूपी परिवर्तनों की क्या व्याख्या है, आदि। इस प्रकार के अनेक प्रश्न मानव मस्तिष्क में उठ रहे थे। चिन्तकों ने अपने चिन्तन एवं अनुभव के बल पर इनके अनेक प्रकार से उत्तर दिये। चिन्तकों या दार्शनिकों के इन विविध उत्तर या समाधानों का कारण दोहरा था, एक ओर वस्तुतत्त्व या सत्ता की बहुआयामिता और दूसरी ओर मानवीय बुद्धि, ऐन्द्रिक अनुभूति एवं अभिव्यक्ति सामर्थ्य की सीमितता। फलतः प्रत्येक चिन्तक या दार्शनिक ने सत्ता को अलग-अलग रूप में व्याख्यायित किया।

अनेकान्तवाद का मूल प्रयोजन सत्य को उसके विभिन्न आयामों में देखने, समझने और समझाने का प्रयत्न है। यही कारण है कि मानवीय प्रज्ञा के विकास के प्रथम चरण से ही ऐसे प्रयास परिलक्षित होने लगते हैं। भारतीय मनीषा के प्रारम्भिक काल में हमें इस दिशा में दो प्रकार के प्रयत्न दृष्टिगत होते हैं - (क) बहुआयामी सत्ता के किसी पक्ष विशेष की स्वीकृति के आधार पर अपनी दार्शनिक मान्यता का प्रस्तुतीकरण तथा (ख) उन एकपक्षीय (एकान्तिक) अवधारणाओं के समन्वय का प्रयास। समन्वयसूत्र का सृजन ही अनेकान्तवाद की व्यावहारिक उपादेयता को स्पष्ट करता है।

वस्तुतः अनेकान्तवाद का कार्य त्रिविध है- प्रथम, तो यह विभिन्न एकान्तिक अवधारणाओं के गुण-दोषों की तार्किक समीक्षा करता है, दूसरे वह उस समीक्षा में यह देखता है कि इस अवधारणा में जो सत्यांश है वह किस अपेक्षा से है, तीसरे, वह उन सोपक्षिक सत्यांशों के आधार पर, उन एकान्तवादों को समन्वित करता है।

इस प्रकार अनेकान्तवाद मात्र तार्किक पद्धति न होकर एक व्यावहारिक दार्शनिक पद्धति है। यह एक सिद्धान्त मात्र न होकर, सत्य को देखने और समझने की पद्धति (method or system) विशेष है, और यही उसकी व्यावहारिक उपादेयता है।

अनेकान्तवाद का व्यावहारिक पक्ष

अनेकान्त का व्यावहारिक जीवन में क्या मूल्य और महत्व है, इसका यदि ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन करें तो हमें सर्वप्रथम उसका उपयोग विवाद पराङ्मुखता के साथ साथ परपक्ष की अनावश्यक आलोचना व स्वपक्ष की अतिरेक प्रशंसा से बचना है। इस प्रकार का निर्देश हमें सर्वप्रथम सूत्रकृतांग (१/१/२/२३) में मिलता है। जहाँ यह कहा गया है कि जो अपने पक्ष की प्रशंसा और पक्ष की निन्दा में रत हैं, वे दूसरों के प्रति द्वेष वृत्ति का विकास करते हैं, परिणाम स्वरूप संसार में भ्रमण करते हैं। साथ ही महावीर चाहते थे कि इस अनेकान्त शैली के माध्यम से कथ्य का सम्यक् रूप से स्पष्टीकरण हो और इस तरह का प्रयास उन्होंने भगवतीसूत्र में अनैकान्तिक उत्तरों के माध्यम से किया है। जैसे जब उनसे पूछा गया कि सोना अच्छा है या जागना तो उन्होंने कहा कि पापियों का सोना व धार्मिकों का जागना अच्छा है। जैन दार्शनिकों में इस अनेकान्तदृष्टि का व्यावहारिक प्रयोग सर्वप्रथम सिद्धसेन दिवाकर ने किया। उन्होंने उद्घोष किया कि संसार के एकमात्र गुरु उस अनेकान्तवाद को नमस्कार है जिससे बिना संसार का व्यवहार ही असम्भव है। परमतत्त्व या परमार्थ की बात बहुत की जा सकती है किन्तु वह मनुष्य जो इस संसार में रहता है उसके लिए परमार्थ सत्य की बात करना उतनी सार्थक नहीं है जितनी व्यवहार जगत् की और व्यवहार का क्षेत्र एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ अनेकांत दृष्टि के बिना काम नहीं चलता है।

परिवार के एक ही स्त्री को कोई पत्नी कहता है, कोई पुत्रबधू कहता है, कोई मां कहता है तो कोई दादी, कोई बहन कहता है तो कोई चाची, नानी आदि नामों से पुकारता है। एक व्यक्ति के सन्दर्भ में विभिन्न पारिवारिक संबंधों की इस संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है। आर्थिक क्षेत्र में भी अनेक ऐसे प्रश्न हैं जो किसी एक तात्त्विक एकान्तवादी अवधारणा के आधार पर नहीं सुलझाए जा सकते हैं। उदाहरण के रूप में यदि हम एकान्तरूप से व्यक्ति को परिवर्तनशील मानते हैं तो आधुनिक शिक्षा प्रणाली में परीक्षा, प्रमाणपत्र व उसके आधार पर मिलने वाली नौकरी आदि में एकरूपता नहीं होगी। यदि व्यक्ति परिवर्तनशील है, क्षण-क्षण बदलता ही रहता है तो अध्ययन करने वाला छात्र भिन्न होगा और जिसे प्रमाण पत्र मिलेगा वह परीक्षा देने वाले से भिन्न होगा और उन प्रमाण पत्रों के आधार पर जिसे नौकरी मिलेगी वह उनसे पृथक् होगा। इस प्रकार व्यवहार के क्षेत्र में असंगतियां होंगी, यदि इसके विरुद्ध हम यह मानें कि व्यक्तित्व में परिवर्तन ही नहीं होता तो उसके प्रशिक्षण की व्यवस्था निरर्थक होगी। इस प्रकार अनेकान्त दृष्टि का मूल आधार व्यवहार की समस्याओं का निराकरण करना है। प्राचीन आगमों में इसका उपयोग विवादों और आग्रहों से बचने तथा कथनों को स्पष्ट करने के लिए ही किया गया है। सर्वप्रथम आचार्य सिद्धसेन दिवाकर ने इस अनेकान्त दृष्टि का प्रयोग दार्शनिक विरोधों के समन्वय की दिशा में किया। उन्होंने एक और परस्पर विरोधी एकान्तिक मान्यताओं में दोषों की उद्भावना करके बताया कि कोई भी एकान्तिक मान्यता न तो व्यावहारिक है न ही सत्ता का सम्यक् एवं सत्य स्वरूप ही प्रस्तुत करती है। किन्तु उनकी विशेषता यह है कि वे केवल दोषों की उद्भावना करके ही सीमित नहीं रहे अपितु उन्होंने उन परस्पर विरोधी धारणाओं में निहित सत्यता का भी दर्शन किया और सत्य के समग्र स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए उन्हें समन्वित करने का भी प्रयत्न किया। जहां उनके पूर्व तक दूसरे दर्शनों को मिथ्या कहकर उनका माखौल उड़ाया जाता है, वहीं उन्होंने विभिन्न नयों के आधार पर उनकी सत्यता को स्पष्ट किया। मात्र यही नहीं जिन मत को भी मिथ्या-मत समूह कहकर उन सभी के प्रति

समादर का भाव प्रकट किया। सिद्धसेन के पश्चात् यद्यपि समन्तभद्र ने भी ऐसा ही एक प्रयास किया और विभिन्न दर्शनों में सापेक्षिक सत्यों को विभिन्न नयों के आधार पर व्याख्यायित किया। फिर भी जिन मत को मिथ्या-मत समूह कहने का जो साहस सिद्धसेन के चिन्तन में था, वह सामंतभद्र के चिंतन में नहीं आ पाया। सिद्धसेन और समंतभद्र के पश्चात् जिस दार्शनिक ने अनेकान्त दृष्टि की समन्वयशीलता का सर्वाधिक उपयोग किया था वे आचार्य हरिभद्र हैं— हरिभद्र से पूर्व दिगम्बर परम्परा में कुन्द कुन्द ने भी एक प्रयत्न किया था। उन्होंने नियमसार में व्यक्ति की बहुआयामिता को स्पष्ट करते हुए यह कहा था कि व्यक्ति को स्वमत में व परमत के विवाद में नहीं पड़ना चाहिए। किन्तु अनेकांत दृष्टि से विभिन्न दर्शनों में पारस्परिक समन्वय का जो प्रयत्न हरिभद्र ने, विशेष रूप से अपने ग्रंथ शास्त्रवार्तासमुच्चय में किया वह निश्चय ही विरल है। हरिभद्र ने अनेक प्रसंगों में अपनी वैचारिक उदारता व समन्वयशीलता का परिचय दिया है जिसकी चर्चा हमनें अपने लघु पुस्तिका, आचार्य हरिभद्र व उनका अवदान, में की है। विस्तारभय से हम उन सब में यहाँ जाना नहीं चाहते। अनेकान्त की उन उदार शैली का प्रभाव परवर्ती जैन आचार्यों पर भी रहा और यही कारण था कि दूसरे दर्शनों की समालोचना करते हुए भी वे आग्रही नहीं बने । उन्होंने एक सीमा तक उसमें निहित सत्यों को देखने का प्रयत्न किया।

दार्शनिक विचारों के समन्वय का आधार अनेकांतवाद :

भगवान् महावीर और बुद्ध के समय भारत में वैचारिक संघर्ष और दार्शनिक विवाद अपने चरम सीमा पर थे। जैन आगमों के अनुसार उस समय ३६३ और बौद्ध आगमों के अनुसार ६२ दार्शनिक मत प्रचलित थे। वैचारिक आग्रह और मतान्धता के इस युग में एक ऐसे दृष्टिकोण की आवश्यकता थी, जो लोगों को आग्रह एवं मतान्धता से ऊपर उठकर सही दिशा निर्देश दे सके। भगवान बुद्ध ने इस आग्रह एवं मतान्धता से ऊपर उठने के लिए विवाद पराङ्मुखता को अपनाया। सुत्तनिपात में वे कहते है कि मैं विवाद के दो फल बताता है। एक तो वह अपूर्ण व एकांगी होता है और दूसरे कलह एवं अशान्ति का कारण होता है। अतः निर्वाण को

निर्विवाद भूमि समझने वाला साधक विवाद में न पड़े (सुत्तनिपात ५१-२१)। बुद्ध ने अपने युग में प्रचलित सभी पर विरोधी दार्शनिक दृष्टिकोणों को सदोष बताया और इस प्रकार अपने को किसी भी दर्शनिक मान्यता के साथ नहीं बांधा। वे कहते है कि पंडित किसी दृष्टि या वाद में नहीं पड़ता (सुत्तनिपात-५१-३)। बुद्ध की दृष्टि में दार्शनिक वादविवाद निर्वाण मार्ग के साधक के कार्य नहीं हैं (सुत्तनिपात-४६-८-९)। अनासक्त, मुक्त पुरुष के पास विवाद रूपी युद्ध के लिए कोई कारण ही शेष नहीं रह जाता। इसी प्रकार भगवान् महावीर ने भी आग्रह को साधना का संम्यक् पथ नहीं समझा। उन्होंने कहा कि आग्रह, मतान्धता या एकांगी दृष्टि उचित नहीं है जो व्यक्ति अपने मत की प्रशंसा और दूसरों की निन्दा करने में ही पांडित्य दिखाते हैं, वे संसार चक्र में घूमते रहते हैं (सूत्रकृतांग १/१/२-२३)। इस प्रकार भगवान् महावीर व बुद्ध दोनों ही उस युग की आग्रह वृत्ति एवं मतान्धता से जन मानस को मुक्त करना चाहते थे फिर भी बुद्ध और महावीर की दृष्टि में थोड़ा अन्तर था। जहाँ बुद्ध इन विवादों से बचने की सलाह दे रहे थे, वहीं महावीर इनके समन्वय की एक ऐसी विधायक दृष्टि प्रस्तुत कर रहे थे, जिसका परिणाम स्याद्वाद है।

स्याद्वाद विविध दार्शनिक एकान्तवादों में समन्वय करने का प्रयास करता है। उसकी दृष्टि में अनित्यवाद-क्षणिकवाद, द्वैतवाद-अद्वैतवाद, भेदवाद-अभेदवाद आदि सभी वस्तु स्वरूप के आंशिक पक्षों को स्पष्ट करते हैं। इनमें से कोई भी असत्य तो नहीं है किन्तु पूर्ण सत्य भी नहीं है। यदि इनको कोई असत्य बनाता है तो वह आंशिक सत्य को पूर्ण मान लेने का उनका आग्रह ही है। स्याद्वाद अपेक्षा भेद से इस सभी के बीच समन्वय करने का प्रयास करता है और यह बताता है कि सत्य तभी असत्य बन जाता है, जबकि हम आग्रही दृष्टि से उसे देखते हैं। यदि हम हमारी दृष्टि को या अपने को आग्रह से ऊपर उठाकर देखें तो हमें सत्य का दर्शन हो सकता है। सत्य का सच्चा प्रकाश केवल अनाग्रही को ही मिल सकता है। महावीर के प्रथम शिष्य गौतम का जीवन स्वयं इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है। गौतम के केवल्यज्ञान में आखिर कौन सा तत्त्व बाधक बन रहा था? महावीर ने स्वयं

इसका समाधान करते हुए गौतम से कहा था–हे गौतम तेरा मेरे प्रति जो ममत्व है यही तेरे केवलज्ञान (सत्य दर्शन) का बाधक है। महावीर की स्पष्ट घोषणा थी कि सत्य का सम्पूर्ण दर्शन आग्रह के घेरे में रहकर नहीं किया सकता है। आग्रह बुद्धि या दृष्टिराग सत्य को असत्य बना देता है। सत्य का प्रकटन आग्रह में नहीं, अनाग्रह में होता है, विरोध में नहीं, समन्वय में होता है। सत्य का साधक अनाग्रही और वीतराग होता है, उपाध्याय यशोविजयजी स्यद्वाद की इसी अनाग्रही एवं समन्वयात्मक दृष्टि को स्पष्ट करते हुए अध्यात्मोपनिषद् में लिखते हैं-

यस्य सर्वत्र समता नयेषु, तनयेष्विव।
तस्यानेकान्तवादस्य क्व न्यूनाधिकशेमुषी।।६१
तेन स्याद्वाद्वमालंब्य सर्वदर्शन तुल्यताम्।
मोक्षोद्देशाविशेषेण यः पश्यति सः शास्त्रवित्।।७०
माध्यस्थ्यमेव शास्त्रार्थो येन तच्चारु सिद्धयति।
स एव धर्मवादः स्यादन्यद्वालिशवल्गनम्।।७१
माध्यस्थ सहितं ह्नोकपदज्ञानमपि प्रमा।
शास्त्रकोटिर्वृथैवान्या तथा चोक्तं महात्मना।।७३

सच्चा अनेकान्तवादी किसी दर्शन से द्वेष नहीं करता। वह सम्पूर्ण दृष्टिकोणों (दर्शनों) को इस प्रकार वात्सल्य दृष्टि से देखता है जैसे कोई पिता अपने पुत्र को, क्योंकि अनेकान्तवादी की न्यूनाधिक बुद्धि नहीं हो सकती। सच्चा शास्त्रज्ञ कहे जाने का अधिकारी तो वही है, जो स्याद्वाद का आलम्बन लेकर सम्पूर्ण दर्शनों में समान भाव रखता है। वास्तव में माध्यस्थ भाव ही शास्त्रों का गूढ़ रहस्य है। माध्यस्थ भाव रहने पर शास्त्र के पद का ज्ञान भी सफल है अन्यथा करोड़ों शास्त्रों का ज्ञान भी वृथा है। क्योंकि जहाँ आग्रह बुद्धि होती है वहाँ विपक्ष में निहित सत्य का दर्शन संभव नहीं होता। वस्तुतः शाश्वतवाद, उच्छेदवाद, नित्यवाद अनित्यवाद, भेदवाद, द्वैतवाद, नियतिवाद, पुरुषार्थवाद, आदि जितने भी दार्शनिक मत-मतान्तर हैं, वे सभी परम सत्ता के विभिन्न पहलुओं से लिये गये चित्र हैं और आपेक्षित रूप से सत्य हैं। द्रव्य दृष्टि और पर्याय दृष्टि के आधार पर इन विरोधी सिद्धान्तों में

समन्वय किया जा सकता है। अतः एक सच्चा स्याद्वादी किसी भी दर्शन से द्वेष नहीं करता है, वह सभी दर्शनों का आराधक होता है। परमयोगी आनन्दघनजी लिखते हैं–

षट् दरसण जिन अंग भणोजे, न्याय षडंग जो साधे रे।
नमि जिनवरना चरण उपासक, षटदर्शन आराधे रे ।।१।।
जिन सुर पादप पाय बखाणुं, सांख्य जोग दोय भेदे रे।
आतम सत्ता विवरण करता, लही दुय अंग अखेदे रे ।।२।।
भेद अभेद सुगत मीमांसक, जिनपर दोय कर भारी रे।
लोकालोक अवलंबन भजिये, गुरुगमथी अवधारी रे ।।३।।
लोकायतिक सुख कूख जिनवरकी, अंश विचार जो कीजे।
तत्त्व विचार सुधारस धारा, गुरुगम विण केम पीजे ।।४।।
जैन जिनेश्वर उत्तम अंग, अंतरंग बहिरंग रे।
अक्षर न्यास धरा आराधक, आराधे धरी संगे रे ।।५।।

अनेकांत धार्मिक सहिष्णुता के क्षेत्र में :

सभी धर्म साधना पद्धतियों का मुख्य लक्ष्य राग, आसक्ति, अहं एवं तृष्णा की समाप्ति रहा है। जहाँ धर्म की साधना का लक्ष्य वीतरागता होना और बौद्ध दर्शन की साधना का लक्ष्य वीततृष्ण होना माना गया है। वहीं वेदान्त में अहं और आसक्ति से ऊपर उठना ही मानव का साध्य बताया गया है। लेकिन क्या एकांत या आग्रह वैचारिक राग, वैचारिक आसक्ति, वैचारिक तृष्णा अथवा वैचारिक अहं के ही रूप नहीं हैं और जब तक वे उपस्थित हैं, धार्मिक साधना के क्षेत्र में लक्ष्य की सिद्धि कैसे होगी? जिन साधना पद्धतियों में अहिंसा के आदर्श को स्वीकार किया गया उनके लिए आग्रह या एकान्त वैचारिक हिंसा का प्रतीक भी बन जाता है। एक ओर साधना के वैयक्तिक पहलू की दृष्टि से मताग्रह वैचारिक आसक्ति या राग का ही रूप है तो दूसरी ओर साधना के सामाजिक पहलू की दृष्टि से वह वैचारिक हिंसा है। वैचारिक आसक्ति और वैचारिक हिंसा से मुक्ति के लिए धार्मिक क्षेत्र में अनाग्रह और अनेकान्त की साधना अपेक्षित है। वस्तुतः धर्म का आविर्भाव मानव जाति में शांति और सहयोग के विस्तार के लिए

हुआ था। धर्म मनुष्य को मनुष्य से जोड़ने के लिए था लेकिन आज वही धर्म मनुष्य-मनुष्य में विभेद की दीवारें खींच रहा है। धार्मिक मतान्धता में हिंसा, संघर्ष, छल, छद्म, अन्याय, अत्याचार क्या नहीं हो रहा है? क्या वस्तुतः इसका कारण धर्म हो सकता है? इसका उत्तर निश्चित रूप से हाँ में नहीं दिया जा सकता। यथार्थ में धर्म नहीं किन्तु धर्म का आवरण डालकर मानव की महत्त्वकांक्षा, उसका अहंकार ही यह सब करवाता रहा है। यह धर्म नहीं, धर्म का नकाब डाले अधर्म है।

मूल प्रश्न यह है कि क्या धर्म अनेक हैं या हो सकते हैं? इस प्रश्न का उत्तर अनैकांतिक शैली से यह होगा कि धर्म एक भी है और अनेक भी। साध्यात्मक धर्म या धर्मों का साध्य एक है जबकि साधनात्मक धर्म अनेक हैं। साध्य रूप में धर्मों की एकता और साधन रूप से अनेकता को ही यथार्थ दृष्टिकोण कहा जा सकता है। सभी धर्मों का साध्य है-समत्वलाभ (समाधि) अर्थात् आन्तरिक तथा बाह्य शान्ति की स्थापना तथा उसके लिए विक्षोभ के जनक राग-द्वेष और अस्मिता (अहंकार) का निराकरण। लेकिन राग-द्वेष और अस्मिता के निराकरण के उपाय क्या हों? यही विचार भेद प्रारम्भ होता है, लेकिन यह विचार भेद विरोध का आधार नहीं बन सकता। एक ही साध्य की ओर उन्मुख होने से वे परस्पर विरोधी नही कहे जा सकते। एक ही केन्द्र से योजित होने वाली परिधि से खिंची हुई विभिन्न रेखाओं में पारस्परिक विरोध प्रतीत अवश्य होता है किन्तु वह यथार्थ में होता नहीं है। क्योंकि केन्द्र से संयुक्त प्रत्येक रेखा में एक दूसरे को काटने की क्षमता नहीं होती है किन्तु जैसे ही वह केन्द्र का परित्याग करती है वह दूसरी रेखाओं को अवश्य ही काटती है। साध्य सभी एकता में साधन रूपी धर्मों की अनेकता स्थित है। अतः यदि धर्मों का साध्य एक है तो उनमें विरोध कैसा? अनेकान्त, धर्मों की साध्यपरक मूलभूत एकता और साधन परक अनेकता को इंगित करता है।

विश्व के विभिन्न धर्माचार्यों ने अपने युग की तात्कालिक परिस्थितियों से प्रभावित होकर अपने सिद्धान्तों एवं साधनों के बाह्य नियमों का प्रतिपादन किया। देशकालगत परिस्थितियों और साधकों की साधना की क्षमता की

विभिन्नता के कारण धर्म साधना के बाह्य रूपों में भिन्नताओं का आ जाना स्वाभाविक ही था और ऐसा हुआ भी। किन्तु मनुष्य की अपने धर्माचार्य के प्रति ममता (रागात्मकता) और उसके अपनेमन में व्याप्त आग्रह और अहंकार ने उसे अपने धर्म या साधना पद्धति को ही एक मात्र एवं अन्तिम सत्य मानने को बाध्य किया। फलस्वरुप विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों और उनके बीच साम्प्रदायिक वैमनस्य प्रारम्भ हुआ । यद्यपि वैयक्तिक अहं धर्म-सम्प्रदायों के निर्माण का एक कारण अवश्य है लेकिन वही एक मात्र कारण नहीं है। बौद्धिक भिन्नता और देशकालगत तथ्य भी इसके कारण रहे हैं और इसके अतिरिक्त पूर्व प्रचलित परम्पराओं में आयी हुई विकृतियों के संशोधन के लिए भी सम्प्रदाय बने। उनके अनुसार सम्प्रदाय बनने के निम्न कारण हो सकते है:

(१) ईर्ष्या के कारण (२) किसी व्यक्ति की प्रसिद्धि की लिप्सा के कारण (३) किसी वैचारिक मतभेद (मताग्रह) के कारण (४) किसी आचार संबंधी नियमोपनियम में भेद के कारण (५) किसी व्यक्ति या पूर्व सम्प्रदाय द्वारा अपमान या खींचातान होने के कारण (६) किसी विशेष सत्य को प्राप्त करने की दृष्टि से और (७) किसी साम्प्रदायिक परम्परा या क्रिया में द्रव्य, क्षेत्र एवं काल के अनुसार संशोधन या परिवर्तन करने की दृष्टि से। उपरोक्त कारणों में अंतिम दो को छोड़कर शेष सभी कारणों से उत्पन्न सम्प्रदाय आग्रह, धार्मिक असहिष्णुता और साम्प्रदायिक विद्वेष को जन्म देते हैं।

विश्व इतिहास का अध्येता इसे भलीभांति जानता है कि धार्मिक असहिष्णुता ने विश्व में जघन्य दुष्कृत्य कराये। आश्चर्य तो यह है कि इस दमन, अत्याचार, नृशंसता और रक्त प्लावन को धर्म का बाना पहनाया गया। शान्ति प्रदाता धर्म ही अशांति का कारण बना। आज के वैज्ञानिक युग में धार्मिक अनास्था का मुख्य कारण उपरोक्त भी है। यद्यपि विभिन्न मतों, पंथों और वादों में बाह्य भिन्नता परिलक्षित होती है किन्तु यदि हमारी दृष्टि व्यापक और अनाग्रही हो तो उसमें भी एकता और समन्वय के सूत्र परिलक्षित हो सकते हैं।

अनेकांत विचार दृष्टि विभिन्न-धर्म सम्प्रदायों की समाप्ति द्वारा एकता का प्रयास नहीं करती है। क्योंकि वैयक्तिक रुचि भेद एवं क्षमता भेद तथा

देशकाल गत भिन्नताओं के होते हुए विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों की उपस्थिति अपरिहार्य है। एक धर्म या एक सम्प्रदाय का नारा असंगत एवं अव्यावहारिक नहीं अपितु अशांति और संघर्ष का कारण भी है। अनेकांत विभिन्न धर्म सम्प्रदायों की समाप्ति का प्रयास न होकर उन्हें एक व्यापक पूर्णता में सुसंगत रूप से संयोजित करने का प्रयास हो सकता है। लेकिन इसके लिए प्राथमिक आवश्यकता है—धार्मिक सहिष्णुता और सर्व धर्म समभाव की।

अनेकांत के समर्थक जैनचार्यों ने इसी धार्मिक सहिष्णुता का परिचय दिया है। आचार्य हरिभद्र की धार्मिक सहिष्णुता तो सर्व विदित ही है। अपने ग्रन्थ शास्त्रवार्ता समुचुच्य में उन्होंने बुद्ध के अनात्मवाद, न्याय दर्शन के ईश्वर कर्तृत्ववाद और वेदान्त के सर्वात्मवाद (ब्रह्मवाद) में भी संगति दिखाने का प्रयास किया। अपने ग्रन्थ लोकतत्व संग्रह में आचार्य हरिभद्र लिखते है:

पक्षपातो न मे वीरे न द्वेषः कपिलादिषु।
युक्तिमद्वचनं यस्य, तस्य कार्य परिग्रहः ।।

मुझे न तो महावीर के प्रति पक्षपात है और न कपिलादि मुनिगणों के प्रति द्वेष है। जो भी वचन तर्कसंगत हो उसे ग्रहण करना चाहिए।

इसी प्रकार आचार्य हेमचन्द्र ने शिव-प्रतिमा को प्रणाम करते समय सर्व देव समभाव का परिचय देते हुए कहा था:

भवबीजांकुरजनना, रागद्या क्षयमुपागता यस्य।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरौ, जिनो वा नमस्तस्मै ।।

संसार परिभ्रमण के कारण रागादि जिसके क्षय हो चुके हैं उसे, मैं प्रणाम करता हूँ चाहे वे ब्रह्मा हों, विष्णु हों, शिव हों या जिन हों।

राजनैतिक क्षेत्र में अनेकान्तवाद के सिद्धान्त का उपयोग :

अनेकान्तवाद का सिद्धान्त न केवल दार्शनिक एवं धार्मिक अपितु राजनैतिक विवाद भी हल करता है। आज का राजनैतिक जगत् भी वैचारिक संकुलता से परिपूर्ण है। पूंजीवाद, समाजवाद, साम्यवाद, फासीवाद, नाजीवाद आदि अनेक राजनैतिक विचारधाराएं तथा राजतन्त्र, कुलतन्त्र अधिनायक तन्त्र, आदि अनेकानेक शासन प्रणालियां वर्तमान में प्रचलित हैं। मात्र इतना

ही नहीं उनमें से प्रत्येक एक दूसरे की समाप्ति के लिए प्रयत्नशील हैं। विश्व के राष्ट्र खेमों में बंटे हुए हैं और प्रत्येक खेमें का अग्रणी राष्ट्र अपना प्रभाव क्षेत्र बढ़ाने हेतु दूसरे के विनाश में तत्पर है। मुख्य बात यह है कि आज का राजनैतिक संघर्ष मात्र आर्थिक हितों का संघर्ष न होकर वैचारिकता का भी संघर्ष है। आज अमेरिका, चीन और रूस अपनी वैचारिक प्रभुसत्ता के प्रभाव को बढ़ाने के लिये ही प्रतिस्पर्धा में लगे हुए हैं। एक दूसरे का नाम-शेष करने की उनकी यह महत्वाकांक्षा कहीं मानव जाति का ही नाम-शेष न कर दे।

आज के राजनैतिक जीवन में स्याद्वाद के दो व्यावहारिक फलित– वैचारिक सहिष्णुता और समन्वय अत्यन्त उपादेय हैं। मानव जाति ने राजनैतिक जगत् में, राजतन्त्र से प्रजातन्त्र तक की जो लम्बी यात्रा तय की है उसकी सार्थकता स्याद्वाद दृष्टि को अपनाने में ही है। विरोधी पक्ष द्वारा की जाने वाली आलोचना के प्रति सहिष्णु होकर उसके द्वारा अपने दोषों को समझना और उन्हें दूर करने का प्रयास करना, आज के राजनैतिक जीवन की सबसे बड़ी आवश्यकता है। विपक्ष की धारणाओं में भी सत्यता हो सकती है और सबल विरोधी दल की उपस्थिति से हमें अपने दोषों के निराकरण का अच्छा अवसर मिलता है, इस विचार-दृष्टि और सहिष्णु भावना में ही प्रजातन्त्र का भविष्य उज्ज्वल रह सकता है। राजनैतिक क्षेत्र में संसदीय प्रजातन्त्र (Parliamentary democracy) वस्तुतः राजनैतिक स्याद्वाद है। इस परम्परा में बहुमत दल द्वारा गठित सरकार अल्पमत दल को अपने विचार प्रस्तुत करने का अधिकार मान्य करती है और यथा सम्भव उससे लाभ भी उठाती है। दार्शनिक क्षेत्र में जहाँ भारत स्याद्वाद का सर्जक है, वहीं वह राजनैतिक क्षेत्र में उपयोग करने का दायित्व भारतीय राजनीतिज्ञों पर है। इसी प्रकार हमें यह भी समझना है कि राज्य-व्यवस्था का मूल लक्ष्य जनकल्याण को दृष्टि में रखते हुए विभिन्न राजनैतिक विचारधाराओं के मध्य एक सांग-संतुलन स्थापित करना है। आवश्यकता सैद्धांतिक विवादों की नहीं अपितु जनहित के सरंक्षण एवं मानव की पाशविक वृत्तियों के नियन्त्रण की है।

मनोविज्ञान और अनेकान्तवाद

वस्तुतः अनेकान्तवाद न केवल एक दार्शनिक पद्धति है अपितु वह मानवीय व्यक्तित्व की बहुआयामिता को भी स्पष्ट करती है। जिस प्रकार वस्तुतत्त्व विभिन्न गुणधर्मों से युक्त होता है उसी प्रकार से मानव व्यक्तित्व भी विविध विशेषताओं या विलक्षणताओं का पुंज है, उसके भी विविध आयाम हैं। प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व के भी विविध आयाम या पक्ष होते है, मात्र यहीं नहीं उसमें परस्पर विरोधी गुण भी देखने को मिलते हैं। सामान्यतय वासना व विवेक परस्पर विरोधी माने जाते हैं किन्तु मानव व्यक्तित्व में ये दोनों विरोधी गुण एक साथ उपस्थित हैं। मनुष्य में एक ओर अनेकानेक वासनायें, इच्छायें और आकांक्षाएं रही हुई होती हैं तो दूसरी ओर उसमें विवेक का तत्त्व भी होता है जो उसकी वासनाओं, आकांक्षाओं और इच्छाओं पर नियंत्रण रखता है। यदि मानव व्यक्तित्व को समझना है तो हमें उसके वासनात्मक पहलू और आदर्शात्मक पहलू (विवेक) दोनों को ही देखना होगा। मनुष्य में न केवल वासना और विवेक के परस्पर विरोधी गुण पाये जाते हैं, अपितु उसमें अनेक दूसरे भी परस्पर विरोधी गुण देखें जाते हैं। उदाहरणार्थ विद्वता या मूर्खता को लें। प्रत्येक व्यक्ति में विद्वत्ता में मूर्खता और मूर्खता में विद्वत्ता समाहित होती है। कोई भी व्यक्ति समग्रतः विद्वान् या समग्रतः मूर्ख नहीं होता है। मूर्ख में भी कहीं न कहीं विद्वत्ता और विद्वान् में भी कहीं न कहीं मूर्खता छिपी होती रहती है। किसी को विद्वान् या मूर्ख मानना, यह सापेक्षित कथन ही हो सकता है। मानव व्यक्तित्व के सन्दर्भ में मनोविश्लेषणवादियों ने वासनात्मक अहम् और आदर्शात्मक अहम् की जो अवधारणाएं प्रस्तुत की हैं वे यही सूचित करती हैं कि मानव व्यक्तित्व बहुआयामी है। उसमें ऐसे अनेक परस्पर विरोधी गुणधर्म छिपे हुए हैं। प्रत्येक व्यक्ति में जहाँ एक ओर कोमलता या करुणा का भाव रहा हुआ है वहीं दूसरी ओर उसमें आक्रोश और अहंकार भी विद्यमान है। एक मनुष्य के अन्दर इनफिरियारिटी काम्पलेक्स और सुपीरियारिटी काम्पलेक्स दोनों ही देखें जाते है। कभी-कभी तो हीनत्व की भावना ही उच्चत्व की भावना में अनुस्यूत देखी जाती है। भय और साहस परस्पर विरोधी गुणधर्म हैं।

किन्तु कभी-कभी भय की अवस्था में ही व्यक्ति अकल्पनीय साहस का प्रदर्शन करता है। इस प्रकार मानव व्यक्तित्व में वासना और विवेक, ज्ञान और अज्ञान, राग और द्वेष, कारुणिकता और आक्रोश, हीनत्व और उच्चत्व की ग्रन्थियां एक साथ देखी जाती हैं। इससे यह फलित होता है कि मानव व्यक्तित्व भी बहुआयामी है और उसे सही प्रकार से समझने के लिए अनेकान्त की दृष्टि आवश्यक है।

प्रबन्धशास्त्र और अनेकांतवाद

वर्तमान युग में प्रबन्धशास्त्र एक महत्वपूर्ण विधा है, किन्तु यह विधा भी अनेकान्त दृष्टि पर ही आधारित है। किस व्यक्ति से किस प्रकार कार्य लिया जाये ताकि उसकी सम्पूर्ण योग्यता का लाभ उठाया जा सके, यह प्रबन्धशास्त्र की विशिष्ट समस्या है। प्रबन्धशास्त्र चाहे वह वैयक्तिक हो या संस्थागत उसका सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष तो व्यक्ति ही होता है और प्रबन्ध और प्रशासक की सफलता इसी बात पर निर्भर होती है कि हम उस व्यक्ति के व्यक्तित्व और उसके प्रेरक तत्त्वों को किस प्रकार समझायें। एक व्यक्ति के लिये मृदु आत्मीय व्यवहार एक अच्छा प्रेरक हो सकता है तो दूसरे के लिये कठोर अनुशासन की आवश्यकता हो सकती है। एक व्यक्ति के लिए आर्थिक उपलब्धियां ही प्रेरक का कार्य करती हैं तो दूसरे के लिये पद और प्रतिष्ठा महत्वपूर्ण प्रेरक तत्त्व हो सकते हैं। प्रबन्धव्यवस्था में हमें व्यक्ति की प्रकृति और स्वभाव को समझना आवश्यक होता है। एक प्रबन्धक तभी सफल हो सकता है जब वह मानव प्रकृति की इस बहुआयामिता को समझे और व्यक्ति विशेष के सन्दर्भ में यह जाने की उसके जीवन की प्राथमिकतायें क्या हैं? प्रबन्ध और प्रशासन के क्षेत्र में एक ही चाबुक से सभी को नहीं हाँका जा सकता। जिस प्रबन्धक में प्रत्येक व्यक्ति की प्रकृति की जितनी अच्छी समझ होगी, वही उतना सफल प्रबन्धक होगा। इसके लिए अनेकांत दृष्टि या सापेक्ष दृष्टि को अपनाना आवश्यक है।

प्रबन्धशास्त्र के क्षेत्र में वर्तमान में समग्र गुणवत्ता प्रबन्धन (Total quality management) की अवधारणा प्रमुख बनती जा रही है, किन्तु व्यक्ति अथवा संस्था की समग्र गुणवत्ता का आकलन निरपेक्ष नहीं है।

गुणवत्ता के अन्तर्गत अनेक गुणों की पारस्परिक समन्वयात्मकता आवश्यक होती है विभिन्न गुणों का पारस्परिक सामंजस्य में रहते हुए जो एक समग्र रूप बनता है वह ही गुणवत्ता का आधार है। अनेक गुणों के पारस्परिक सामंजस्य में ही गुणवत्ता निहित होती है। व्यक्ति के व्यक्तित्व में विभिन्न गुण एक दूसरे के साथ समन्वय करते हुए रहते हैं। विभिन्न गुणों की यही सामंजस्यतापूर्ण स्थिति ही गुणवत्ता का आधार है। व्यक्ति के व्यक्तित्व में विभिन्न गुण ठीक उसी प्रकार सामंजस्य पूर्वक रहते हैं जिस प्रकार शरीर के विभिन्न अवयव सामंजस्यपूर्ण स्थिति में रहते हैं। जैसे शरीर के विभिन्न अंगों का सामंजस्य टूट जाना शारीरिक विकृति या विकलांगता का प्रतीक है उसी प्रकार व्यक्ति के जीवन के गुणों में पारस्परिक सांमजस्य में ही समग्र गुणवत्ता का विकास होता है। अनेकान्त दृष्टि व्यक्तित्व के उन विभिन्न गुणों या पक्षों और उनके पारस्परिक सामंजस्य को समझने का आधार है। व्यक्ति में वासनात्मक पक्ष अर्थात् उसकी जैविक आवश्यकताएं और विवेकात्मक पक्ष अर्थात् वासनाओं के संयमन की शक्ति दोनों की अपूर्ण समझ किसी प्रबन्धक के प्रबन्धन की असफलता का कारण ही होगी। समग्र गुणवत्ता विभिन्न गुणों अथवा पक्षों और उनके पारस्परिक सामंजस्य की समझ पर ही आधारित होती है और यह समझ ही प्रबन्धशात्र का प्राण है। दूसरे शब्दों में कहें तो अनेकान्त दृष्टि के आधार पर ही सम्पूर्ण प्रबन्धशास्त्र अवस्थित है। विविध पक्षों के अस्तित्व की स्वीकृति के साथ उनके पारस्परिक सामंजस्य की संभावना को देख पाना प्रबन्धशास्त्र की सर्वोत्कृष्टता का आधार है।

समाजशास्त्र और अनेकान्तवाद

समाजशास्त्र के क्षेत्र में सबसे महत्त्वपूर्ण समस्या व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंधों को सम्यक् प्रकार से समझ पाना या समझा पाना ही है। व्यक्ति के बिना समाज और समाज के बिना व्यक्ति (सभ्य व्यक्ति) का अस्तित्व संभव नहीं है। जहाँ एक ओर व्यक्तियों के आधार पर ही समाज खड़ा होता है। वहीं दूसरी ओर व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण समाज-रूपी कार्यशाला में ही सम्पन्न होता है। जो विचारधारायें व्यक्ति और समाज को एक दूसरे से निरपेक्ष मानकर चलती हैं वे न तो सही रूप में व्यक्ति को समझ पाती

हैं और न ही समाज को। व्यक्ति और समाज दोनों का अस्तित्व परस्पर सापेक्ष है। इस सापेक्षता को समझे बिना न तो व्यक्ति को ही समझा जा सकता है और न समाज को। समाजशास्त्र के क्षेत्र में अनेकान्त दृष्टि व्यक्ति और समाज के इस सापेक्षिक संबंध को देखने का प्रयास करती है। व्यक्ति और समाज एक दूसरे से निरपेक्ष नहीं हैं। यह समझ ही समाजशास्त्र के सभी सिद्धान्तों का मूलभूत आधार है। सामाजिक सुधार के जो भी कार्यक्रम हैं उनका आवश्यक अंग व्यक्ति सुधारना भी है। न तो सामाजिक सुधार के बिना व्यक्ति सुधार संभव है न व्यक्ति सुधार के बिना सामाजिक सुधार। वस्तुतः व्यक्ति और समाज में आंगिकता का संबंध है। व्यक्ति में समाज और समाज में व्यक्ति इस प्रकार अनुस्यूत है कि उन्हें एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। व्यक्ति और समाज की इस सापेक्षिकता को समझना समाजशास्त्र के लिए आवश्यक है और यह समझ अनेकान्त दृष्टि के विकास से ही संभव है क्योंकि वह एकत्व में अनेकत्व अथवा एकता में विभिन्नता तथा विभिन्नता में एकता का दर्शन करती है, उसके लिए एकत्व और पृथकत्व दोनों का ही समान महत्त्व है। वह यह मानकर चलती है कि व्यक्ति और समाज परस्पर सापेक्ष है और एक के अभाव में दूसरे की कोई सत्ता नहीं है।

सामाजिक नैतिकता से जुड़ा एक दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रश्न है वैयक्तिक कल्याण और समाजिक कल्याण में किसे प्रमुख माना जाय? इस समस्या के समाधान के लिये भी हमें अनेकान्त दृष्टि को ही आधार बनाकर चलना होगा। यदि व्यक्ति और समाज परस्पर सापेक्ष है, व्यक्ति के हित में समाज का हित है और समाज के हित में व्यक्ति का हित समाया है तो इन्हें अलग नहीं किया जा सकता है। जो लोग वैयक्तिक हितों और सामाजिक हितों को परस्पर निरपेक्ष मानते हैं, वे वस्तुतः व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंधों से अनभिज्ञ हैं। वैयक्तिक कल्याण और सामाजिक कल्याण परस्पर भिन्न प्रतीत होते हुए भी एक दूसरे से पृथक नहीं हैं। हमें यह मानना होगा कि समाज के हित में ही व्यक्ति का हित है और व्यक्ति के हित में समाज का हित। अतः एकान्त स्वार्थपरतावाद और एकान्त परोपकारवाद दोनों ही संगत सिद्धान्त नहीं हो सकते। न तो वैयक्तिक हितों की उपेक्षा की जा

सकती है न ही सामाजिक हितों की। अनेकान्त दृष्टि हमें यही बताती है कि वैयक्तिक कल्याण में सामाजिक कल्याण और सामाजिक कल्याण में वैयक्तिक कल्याण अनुस्यूत है। दूसरे शब्दों में वे परस्पर सापेक्ष हैं।

पारिवारिक जीवन में स्याद्वाद दृष्टि का उपयोग

कौटुम्बिक क्षेत्र में इस पद्धति का उपयोग परस्पर कुटुम्बों में और कुटुम्ब के सदस्यों में संघर्ष को टालकर शान्तिपूर्ण वातावरण का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। सामान्यतया पारिवारिक जीवन में संघर्ष के दो केन्द्र होते हैं। पिता-पुत्र तथा सास-बहू। इन दोनों विवादों में मूल कारण दोनों का दृष्टिभेद है। पिता जिस परिवेश में बड़ा हुआ, उन्हीं संस्कारों के आधार पर पुत्र का जीवन ढालना चाहता है। पिता की दृष्टि अनुभव प्रधान होती है, जबकि पुत्र की दृष्टि तर्कप्रधान। एक प्राचीन संस्कारों से ग्रसित होता है तो दूसरा उन्हें समाप्त कर देना चाहता है। यही स्थिति सास-बहू में होती है। सास यह अपेक्षा करती है कि बहू ऐसा जीवन जिये जैसा उसने स्वयं बहू के रूप में जिया था, जब कि बहू अपने युग के अनुरूप और अपने मातृ पक्ष के संस्कारों से प्रभावित जीवन जीना जाहती है। मात्र इतना ही नहीं, उसकी अपेक्षा यह भी होती है कि वह उतना ही स्वतन्त्र जीवन जिये, जैसा वह अपने माता-पिता के पास जीती थी। इसके विपरीत स्वसुर पक्ष उससे एक अनुशासित जीवन की अपेक्षा करता है। यही सब विवाद के कारण बनते हैं। इसमें जब तक सहिष्णु दृष्टि और दूसरे की स्थिति को समझने का प्रयास नहीं किया जाता, तब तक संघर्ष समाप्त नहीं हो सकता। वस्तुतः इसके मूल में जो दृष्टिभेद है, उसे अनेकान्त पद्धति से सम्यक् प्रकार से जाना जा सकता है।

वास्तविकता यह है कि हम जब दूसरे के सम्बन्ध में कोई विचार करें, कोई निर्णय लें तो स्वयं अपने को उस स्थिति में खड़ा कर सोचना चाहिए। दूसरे की भूमिका में स्वयं को खड़ा करके ही उसे सम्यक् प्रकार से जाना जा सकता है। पिता-पुत्र से जिस बात की अपेक्षा करता है उसके पहले अपने को पुत्र की भूमिका में खड़ा कर विचार कर ले। अधिकारी कर्मचारी से किस ढंग से काम लेना चाहता है, उसके पहले स्वयं को उस

स्थिति में खड़ा करे, फिर निर्णय ले। यही एक ऐसी दृष्टि है, जिसके अभाव में लोक व्यवहार असम्भव है और इसी आधार पर अनेकान्तवाद जगद्गुरु होने का दावा करता है।

अर्थशास्त्र और अनेकान्त

सामान्यतया अर्थशास्त्र का उद्देश्य जन समान्य का आर्थिक कल्याण होता है किन्तु आर्थिक प्रगति के पीछे मूलतः वैयक्तिक हितों की प्रेरणा ही कार्य करती है। यही कारण है कि अर्थशास्त्र के क्षेत्र में पूंजीवादी और साम्यवादी दृष्टियों के केन्द्र बिन्दु ही भिन्न-भिन्न बन गए। साम्यवादी शक्तियों का आर्थिक क्षेत्र में पिछड़ने क एकमात्र कारण यह रहा कि उन्होंने आर्थिक प्रगति के लिए वैयक्तिक प्रेरणा की उपेक्षा की, किन्तु दूसरी ओर यह भी हुआ कि वैयक्तिक आर्थिक प्रेरणा और वैयक्तिक अर्थलाभ को प्रमुखता देने

क्षमापना

श्रीमद् राजचन्द्र

हे भगवन् ! मैं बहुत भूल गया,

व्यवहार में कोई दोष हुआ हो तो कहा जाता है–मुझसे बड़ी भूल हुई, अब नहीं करूंगा। परन्तु यहाँ जिस दोष या भूल की बात करते हैं वह सब भूलों की मूल भूल, सैद्धान्तिक भूल है, जिसकी बदौलत अनादिकाल से संसार में भटकना पड़ रहा है, जन्ममरण हो रहे हैं। वह भूल यह है कि अन्य को अपना मानना और अपने आपको भूल जाना। भावनाबोध में कृपालुदेव ने भरतेश्वर का दृष्टान्त दिया है, उसमें कहा है कि ऊँगली में से अँगूठी निकल पड़ने से भरतेश्वर को स्व-परका विचार जागृत हुआ कि मैं अपने को सुरूपमान मानता हूँ पर यह तो वस्त्राभूषण की शोभा है और शरीर की शोभा केवल त्वचा के कारण है। त्वचा न हो तो प्रतीत होगा कि वह अतिशय दुर्गन्धयुक्त पदार्थों से भरपूर है। ऐसी यह देह भी मेरी नहीं है तो वे नवयुवतियां, वे कुल दीपक पुत्र, वह अतुल लक्ष्मी और वह छह खंडका साम्राज्य आदि मेरा कैसे हो सकता है? इन सबको मैंने अपना माना, इनमें सुखकी कल्पना की, यह भूल अज्ञान के कारण हुई थी। अब किसी परवस्तु में ममत्व नहीं करूँगा। अहो! मैं बहुत भूल गया! इस प्रकार विचार करते ही भरतेश्वर के अन्तर में से तिमिर पटल हर गया और शुक्लध्यान प्रकट हुआ, उससे अशेष घनघाती कर्म भस्म हो गये और केवलज्ञान प्रकट हो गया। भरतेश्वर की ऋद्धि उत्कृष्ट थी तो भी उन्होंने उसका ममत्व उतार दिया। इस प्रकार प्रत्येक जीव विचार करे तो समझमें आ जाय कि अनादि काल से परवस्तु में मिथ्या ममत्व करते आत्मा बन्धनको प्राप्त हुआ है, इस कारण जन्म-मरण होता है। अपना क्या है, यह विचार करे तो भूल समझमें आती है और वास्तविक भूल जानी जाय तब पश्चात्ताप होता है।

मैंने आपके अमूल्य वचनों को ध्यान में लिया नहीं।

मैं क्यों भूला? मनुष्यदेह दुर्लभ है। उसकी एक घड़ी भी अमूल्य है। उसमें भी किसी सत्पुरुष का उपदेश मिलना अत्यन्त दुर्लभ है। सत्पुरुष के वचन प्राप्त होना त्रिकाल में अत्यंत दुर्लभ है। सत्पुरुष के वचन प्राप्त होना

त्रिकाल में अत्यन्त दुर्लभ होने से अमूल्य हैं, फिर भी जब उनकी प्राप्ति हुई तब उनका माहात्म्य समझा नहीं। उन्हें साधारण गिना या तो पूरा सुना ही नहीं। सत्पुरुष के एक एक वचनको लक्ष्य में लेकर कोई कोई जीव संसार तिर गये हैं— मोक्ष में जा पहुँचे हैं। सत्पुरुष के वचनका विचार करके जीवको निश्चय कर लेना चाहिए कि अब मुझे क्या करना है? यदि निश्चय हो जाय तो फिर उसके प्रयत्न में लगा जा सकता है। कोई पचास हजार रुपया कमाने का लक्ष्य निश्चित करे और फिर प्रयत्न करे तो उससे आधा तो कमा ही सकता है; किन्तु कोई लक्ष्य ही न हो तो वैसा प्रयत्न भी नहीं हो सकता। इसी प्रकार सत्पुरुष के वचन से आत्मा का हित किसमें है, इसका विचार करके अपने कर्तव्य का लक्ष्य स्थिर करना चाहिये। इस तरह सत्पुरुष के वचनों पर लक्ष्य नहीं किया, इसीसे अब तक संसार का अन्त नहीं आया।

आपके कहे हुए अनुपम तत्त्वों का मैंने विचार किया नहीं।

भगवान ने जीव और अजीव तथा उसके विस्तार रूप में नौ तत्व अथवा छह द्रव्य कहे हैं। उसमें अखिल विश्व के पदार्थों का समावेश हो जाता है और जीवों को मोक्ष की प्राप्ति कैसे हो, यह दर्शाया है। अथवा तो आत्मा ही अनुपम तत्त्व है। आत्मा को जान लेने पर विश्व के पदार्थों का ज्ञान भी यथार्थ हो जाता है। भगवान के कहे हुए इन तत्त्वों का गहराई में उतर कर विचार नहीं किया। तत्त्व को समझना यह सिद्धान्तबोध है। उसके लिये प्रथम उपदेश बोध अथवा वैराग्य और उपशम की आवश्यकता है। कषायकी मन्दता हो, एक मात्र मुक्तिकी अभिलाषा हो, आत्महित करने का भाव जगे तब जिज्ञासु या आत्मार्थी बनता है, तभी सद्गुरुका बोध, सिद्धान्तबोध रुचता है और फिर उसीका विचार करता है। दूसरे संसार के विचार त्यागकर भगवान के कहे हुए तत्त्वों का विचार करता है।

आपके प्रणीत किये हुए उत्तम शीलका सेवन किया नहीं।

भगवान के वचन सुने, विचारे तो उनके अनुसार आचरण करने का भाव हो। भगवान ने जिस उत्तम चारित्र या शीलका उपदेश दिया है कि आत्मस्वरूप में रहना, उस शीलका मैंने पालन नहीं किया। अथवा व्यवहार से मुनि के और गृहस्थ के जो धर्म प्रणीत किये हैं, उस तरह से आचरण नहीं किया। प्रयत्न करते-करते जब सत्प्रवृत्ति सहज-स्वाभाविक बन जाती है तब

वह शील कहलाती है। भगवान की आज्ञा से अनुसार बरतने का प्रयत्न नहीं किया। सत्पुरुष के वचन हृदय में उतर जायें, फिर तदनुसार आचरण करना शील है। प्रथम सत्पुरुष के वचन लक्ष्य में ले अर्थात् श्रद्धा दृढ़ हो, फिर उनका गहरा विचार करके तत्त्व को समझे अर्थात् ज्ञान हो और उसके अनुसार आचरण करे अर्थात् शील या चारित्र आवे। इस प्रकार दर्शन, ज्ञान और चारित्र की अनिवार्यता दिखलाई।

आपकी कही हुई दया, शान्ति क्षमा और पवित्रता को मैंने पहचाना नहीं।

शील में आत्मा के समस्त गुणों का जैसे दया, शान्ति, क्षमा और पवित्रता आदि का समावेश होता है। इन गुणों को लौकिक अर्थ में जाना है किन्तु भगवान् ने जिसे दया शान्ति आदि कहा है उसकी पहचान नहीं हुई। दया के बहुत भेद हैं। उसमें एक स्वदया है जिसका अर्थ है—अपने आत्मा को अनादिकाल से कर्मबन्ध करके दुःखी कर रक्खा है वह बन्धन से कैसे मुक्त हो, यह विचार कर धर्म में प्रवेश करना। जो कुछ धर्मक्रिया वगैरह की जाय वह आत्मा के लिये की जाय। आत्मा को कर्मबन्धन से मुक्त करने के लिये लक्ष्यपूर्वक प्रवृत्ति करना दया है। इस कारण दया को धर्मका मूल कहा गया है। कोई मानते हैं कि न बोलना ही शान्त रहना कहलाता है। भगवान ने प्रथम समकित प्रगट करने का कहा है। अपने आत्मा को पहचान कर उसमें स्थित रहना शान्ति है। समकित प्राप्त नहीं हुआ तब तक आत्मा की पहचान नहीं है तब तक कर्म से छुटकारा नहीं हो सकता। आत्मा का लक्ष्य हो जाने के बाद कषाय का निरोध आदि जो कुछ होता है वह सब आत्मा में रहने के लिये होता है। शान्ति अर्थात् समस्त विभावपरिणाम से थकना, निवृत्त होना। स्वभावपरिणाम को पहचान लेने के पश्चात् विभावपरिणाम रुचता नहीं, अतः उससे निवृत्ति हो जाती है। विभाव से हटकर स्वभाव में आवे तो कल्याण है। कल्याण ही शान्ति है। आत्मा की पहचान हो तो उसका माहात्म्य लगता है, फिर जो करता है सो आत्मा के लिये ही होता है। क्षमाका अर्थ है-निमित्त मिलने पर भी क्रोधादि न करना। बलपूर्वक स्वभाव में ही रहना क्षमा है। क्षमा आत्मा का स्वभाव है। क्रोधादि विभाव है। पवित्रता अर्थात् आत्मा की शुद्धता। सबसे पवित्र वस्तु आत्मा है। वह कर्म के [illegible]

कर्मनिर्जरा होती है उतनी ही शुद्धि-पवित्रता हुई कहीं जाती है। सम्यक्त्व होने के बाद निर्जरा होना प्रारंभ होता है। आत्मा की कर्ममलरहित दशा होना मोक्ष है। दया, शान्ति आदि का सेवन करके इस शुद्ध भाव की पहचान करनी है। समकितरूप गुण आवे तो आत्मा के समस्त गुणों की पहचान होता है। 'सर्व गुणांश सो समकित'। समकित होने पर आत्मा विभाव से विमुख होकर स्वभाव की ओर झुकता है। शुद्धात्मा में परिणमन करना यही पवित्रता है।

हे भगवन्! मैं भूला, भटका, घूमा-फिरा और अनन्त संसारकी विडंबना में पड़ा हूँ। मैं पापी हूँ। मैं बहुत मदोन्मत्त और कर्मरज से मलिन हूँ।

आत्मा के गुणों को पहचाना नहीं तब तक भूला और इस कारण संसार में ठोकरें खाई–अज्ञान के कारण जन्म मरण किये। तृष्णा से दुःखी होकर सन्तप्त हुआ और अनन्त संसार की बिडम्बना में पड़ा हूँ। कितना दुःख लगा होगा तब ये वचन निकले होंगे। संसार अत्यन्त दुःखरूप लगे तब उससे प्रीति हटती है और जब संसार से प्रीति हटे तब परमार्थ में लगा जाता है। अनन्त काल का यह संसार है। महावीर भगवान ने जमाली से कहा था कि संसार शाश्वत है और अशाश्वत भी है। सदैव ऐसा का ऐसा ही रहने वाला है इस कारण शाश्वत है और अमुक जीवकी अपेक्षा से वह अशाश्वत है। जीव जगे और पुरुषार्थ करे तो वह संसार से छूट सकता है। इस कारण संसार अनंतकाल का होते हुए भी सभी जीव उसमें अनन्त काल तक रहेंगे, ऐसा नहीं है। वह अनादिसान्त भी है। जब तक समकित नहीं हुआ तब तक अनन्त संसार की उत्पत्ति कर रहा हूँ। पापी हूँ। मिथ्यात्व है तब तक पाप ही है। पाँच महाव्रतों का पालन करता हो परन्तु यदि मिथ्यात्व है तो वह पापी ही है। समस्त पापों का मूल मिथ्यात्व है। जिसे छूटना है उसे प्रथम मिथ्यात्व को टालने का लक्ष्य रखना है। धन, रूप, बल, विद्या, कुल, जाति, ऐश्वर्य और तप, ये आठ प्रकार के मद हैं। जीव इन मदों से मतवाला है। तुच्छ वस्तु मिली उसका अहंकार। अनन्तानुबन्धी कषाय मिथ्यात्व के साथ रहता है, उसे सर्व प्रथम हटाना है। मान न हो तो यहीं मोक्ष हो जाय। मैं जानता हूँ ऐसा जो भास होता हैं वह अनन्तानुबन्धी मान है। वह जाय तो समकित होता है। मिथ्यात्व के जाने से ही मोक्ष का प्रारंभ होता है। जहाँ तक कर्म-

रज है वहाँ तक जीव मलिन है। कर्म के निमित्त से भाव मलिन होते हैं और वे आत्मा को अपवित्र बनाते हैं।

हे परमात्मन् ! आपके कहे हुए तत्त्वों के बिना मेरा मोक्ष नहीं। मैं निरंतर प्रपंच में पड़ा हूँ। अज्ञान से अंध हुआ हूँ, मुझमें विवेकशक्ति नहीं है और मैं मूढ़ हूँ, मैं निराश्रित हूँ, अनाथ हूँ।

मैं ऐसा हूँ परन्तु परमात्मा पवित्र है, सर्व कर्मरज से रहित है। अतएव उनका अवलम्बन लेने के लिये कहते हैं कि हे परमात्मन्! आपके कहे तत्त्व के बिना मेरा मोक्ष प्राप्त करना होगा तब इन तीन का आलंबन लेना पडेगा। मैं क्या करता हूँ? क्षण-क्षण क्या कर रहा हूँ ? इस पर ध्यान रखना चाहिये।

मैं निरन्तर प्रपंच में पड़ा हूँ। प + पंच = पाँच इन्द्रियों के विषयों में लगा रहना प्रपंच है। देखने-सुनने आदि में समय बरबाद कर रहा है। परमात्मा की ओर झुकना हो तो इन्द्रियों का संयम चाहिये। परन्तु मैं तो निरन्तर प्रपंच में लगा रहता हूँ। अज्ञान से, विपरीत बुद्धि से उसे भला माना है। जो छोड़ने योग्य है उसे अच्छा समझा है, हितकारी माना है, इसलिये छूट नहीं सकता।

अज्ञान के कारण अनादि काल से अन्ध हो रहा हूँ। परन्तु सद्गुरु के उपदेश से विवेक आवे तो अज्ञान दूर होता है। पर ऐसी विवेक करने की शक्ति भी मुझमें नहीं है विवेक इतना बलवान है कि वह आवे तो अज्ञान नष्ट हो जाता है। विवेक का कार्य पृथक्करण करना है । हित और अहित, देह और आत्मा आदि को जैसे हैं वैसे भिन्न-भिन्न समझना विवेक है। जहाँ अज्ञान है वहाँ विवेक नहीं होता। जहाँ विवेक नहीं होता वहाँ मूढ़ता होती है। विवेक शक्ति अर्थात् भेदज्ञान। अज्ञानदशा में भी यदि छूटने की अभिलाषा हो तो वह मूढ़ता नहीं कही जा सकती। परन्तु विवेक शक्ति नहीं है और उसका भान भी नहीं है, वह मूढ़ता है। उस दिशा की खबर नहीं है, उसका विवेक नहीं है फिर भी अपने को चतुर माने, मैं समझता हूँ ऐसा माने, यह मूढ़ता है। अज्ञानदशा में से बाहर निकलना हो तो ज्ञानी पुरुष का आश्रय लेना चाहिये। वह लिया नहीं, अतः निराश्रित हूँ। अनाथ हूँ। इस संसार में जिसका कोई न हो वह अनाथ कहलाता है। सच्चा नाथ आत्मा है। वह प्रगटे तब सनाथ हुआ जाता है। सद्गुरु का आश्रय मिले तो भी सनाथ बना जा सकता है।

नीरागी परमात्मन् ! मैं अब आपकी, आपके धर्म की और आपके मुनियों की शरण लेता हूँ।

नाथ कौन ? नीरागी परमात्मा जिसने परमात्मस्वरूप प्राप्त किया है। समस्त जगत राग-द्वेष में पड़ा है। परमात्मा नीरागी है। जिसे संसार से छूटना हो उसे क्या करना चाहिये? परमात्मारूप देव, उनके द्वारा उपदिष्ट धर्म और उस धर्म को समझ कर जो स्वयं आचरण करे और दूसरों को समझावे ऐसा मुनि या गुरु, ये तीन शरण हैं। इनकी उपासना करते हुए जीव सशरण होता है।

मेरे अपराधों का क्षय होकर मैं उन सब पापों से मुक्त होऊँ यह मेरी अभिलाषा है। पूर्वकृत पापों का मैं अब पश्चात्ताप करता हूँ।

शरण क्यों प्राप्त नहीं होती? जीव अपराधी है। जिसकी आराधना करनी चाहिये उसकी आराधना नहीं करता। अपने में जो दोष हैं वे मालूम नहीं होते। सत्ता में दोष हों तो मालूम नहीं होते, निमित्त मिलनेपर वे उभर आते हैं। आत्मा की आराधना नहीं हो पाती, वे मेरे पाप दूर हो जायें, यह मेरी अभिलाषा है। पापसे मुक्त हो तो निर्दोष बने। मोक्ष क्या है? आत्मा की शुद्धता, पापरहित दशा ही मोक्ष है। समस्त कर्म पाप हैं। उनमें चार घाती कर्म मुख्य पाप हैं। वे दूर हों तो परमात्मा हुआ जाता है। अतएव उन घाती कर्मो को नष्ट करने का प्रयत्न करना चाहिये। **'घाती डुंगर आडा अति घणा, तुज दरिसन जगनाथ।'** पाप हुआ हो तो फिर क्या करना ? पश्चात्ताप। पाप करके प्रसन्न हो, उसका अभिमान करे तो जीव तीव्र कर्म बाँधता है। जैसे श्रेणिक राजा ने बाण मारा और वह बाण हरिण को बेधकर वृक्ष में घुस गया; उसका अभिमान करने से नरक का आयुष्य बांधा। और प्रसन्नचन्द्र राजर्षि ने क्रोध के विचारों से सातवीं नरक में जाने योग्य दलित कर्म बाँधे ; परन्तु बादमें पश्चात्ताप करने से वे छूट गये। पाप से मुक्त कैसे हुआ जाता है? पश्चात्ताप करने से। बीस दोहे, क्षमापना आदि बोलने का प्रयोजन इस प्रकार का पश्चात्ताप जगाना है। बहुत भव निष्फल गये पर अब इस भव में आत्मार्थ साध लूँ। सच्चा पश्चात्ताप जगे तो प्रसन्नचन्द्र राजर्षि के समान ठेठ केवलज्ञान तक पहुँचा जा सकता है। भूल हुई हो उसकी क्षमायाचना करे तो अपना हित होता है और दूसरों पर भी असर होती है। पश्चात्ताप से जागृति होती है। असन्मार्ग पीछे मुड़कर सन्मार्ग पर आवे तो कर्त्तव्य का गहरा विचार कर सकता है।

ज्यों-ज्यों मैं सूक्ष्म विचार से गहरा उतरता हूँ त्यों-त्यों आपके तत्त्वों के चमत्कार मेरे स्वरूप का प्रकाश करते हैं।

अपने दोष अन्तर में खोजने पर भगवान की ओर नजर जाती है। भगवान का अन्तर कैसा है? यह समझ में आवे तब मेरा अन्तर भी ऐसा ही है, यह मालूम होता है। भगवान में दोष या विभाव नहीं है, यह विचार करने पर स्वयं दोष और विभाव से विमुख होता है। तीन लोक के नाथ शुद्ध आत्मारूप भगवान है। भगवान के तत्त्व-आत्मस्वरूप तक दृष्टि जाय तो चमत्कार लगता है कि मेरा स्वरूप तो, जैसा आपने प्रकट किया है ऐसा ही है! मूल स्वरूप में कहीं भी भेद नहीं है, कर्म के कारण भेद कहा जाता है। जिनपद निजपद एकता। क्षमापना के बीच रक्खे हुए इस वाक्य में कृपालुदेव ने उत्तम मर्म की बात कह दी है। कर विचार तो पाम। वस्तुस्वरूप समझने के लिये जो गहरा विचार किया जाता है वह सूक्ष्म विचार है।

वस्तु विचारत ध्यावते, मन पावे विश्राम।
रस स्वादत सुख ऊपजे, अनुभव याको नाम।।

ऐसा बनारसीदास ने कहा है। दूसरे विचारों से मन थक जाता है, मस्तक दुखता है। आत्मा का विचार करने से सुख उत्पन्न होता है, शान्ति होती है। गहरा उतरता हूँ अर्थात् बाह्य भाव से छूटता हूँ। ज्ञानीपुरुष के वचन के अवलम्बन से अपना सच्चा स्वरूप समझमें आता है। सदगुरु के उपदेश से जो विचारणा होती है वह सुविचारणा है। दूसरे विचारों से रोक कर मन को आत्मविचार में ले जाना हो तो आत्मवीर्य को प्रस्फुटित करना पड़ता है। बाद में उसका अभ्यास हो जाने पर मन सहज ही उस ओर झुकता है। ऐसी स्थिति में अन्य कार्य करते हुए भी आत्मविचार में रहा जा सकता है। भगवान् का स्वरूप अद्‌भुत है! वैराग्य एवं उपशम द्वारा गहरे उतरने पर मेरे स्वरूप को प्रकाशित करे ऐसा तुम्हारा स्वरूप कैसा जान पड़ता है?

आप नीरागी, निर्विकारी, सत्‌चि स्वरूप, सहजानन्दी, अनन्तज्ञानी, अनन्तदर्शी और त्रैलोक्य प्रकाशक हैं।

ज्ञानी पुरुष कैसे निश्चिन्त हैं, कैसे सुखी हैं, इसका विचार करें तो अपना चित्त इस भाव में जाता है। ज्ञानी पुरुष कैसे हैं सो कहते हैं—नीरागी! उस दशा को समझने के लिये हमें राग का त्याग करना पड़ता है। जब हमें रागद्वेष हो तब भगवान के नीरागी स्वरूप का स्मरण किया जाय तो राग-

द्वेष दूर हो जाते हैं। निर्विकारी अर्थात् रागद्वेष के कारण उत्पन्न होने वाले सर्व विकारों से रहित। सत्-आत्मा, सत् चित् आनन्द स्वरूप, आत्मा को जानने से होने वाले आनन्द स्वरूप, भगवान आत्मिक सुख से सम्पन्न हैं। राग, विकार, और विषयादिक आनन्द दुःख के कारण हैं। भगवान उससे मुक्त हुए हैं, अपने आत्मा के सहज सुखका अनुभव करते हैं। इतना तो अपूर्ण दशा में भी क्वचित् होता है। अब पूर्ण दशा के लक्षण कहते हैं। भगवान पूर्ण दशा को प्राप्त हुए होने से अनन्तज्ञानी और अन्तदर्शी हैं। हे मुमुक्ष ! एक आत्मा को जानने से तू समस्त लोकालोक को जानेगा और सब जानने का फल भी एक आत्मप्राप्ति ही है। इसलिये आत्मा से भिन्न अन्य भावों को जानने की वारंवार की इच्छा से तू निवृत्त हो और एक निजस्वरूप में दृष्टि दे कि जिस दृष्टि से समस्त सृष्टि ज्ञेयरूप से तुझमें दिखायी देगी।

(श्रीमद् राजचन्द्र, अंक ६३१)

सर्व आवरणों का क्षय हो जाने से भगवान को तीनों लोकों और तीनों कालों का ज्ञान है। इस कारण वे त्रैलोक्य प्रकाशक हैं। इन भगवान् के गुणों में चित रखना योग्य है दूसरा जानने की इच्छा से निवृत्त होकर ज्ञानी के स्वरूप का लक्ष्य रखना उचित है।

मैं मात्र अपने हित के लिये आपकी साक्षी में क्षमा चाहता हूँ।

यह क्षमापना किसी सांसारिक सुख की अभिलाषा से नहीं की है; मात्र आत्मा का हित हो, कर्मबन्धन से छुटकारा मिले, इस हेतु से की है। सच्चे भाव से भगवान को अंतर में साक्षी रख कर की है। पूर्वकृत कर्मों का उदय तो आता है मगर उस समय राग-द्वेष न करते हुए समता-क्षमा रक्खूँ जिससे पुनः वैसे कर्मों का बंध न हो यही प्रभु से याचना है, इसके अतिरिक्त अन्य कुछ चाहता नहीं। जो आवे सो सह लेना। भगवान को भूलना नहीं, धीरज छोडना नहीं। दृढ़ता हो तो क्षमा रहती है।

एक पल भी आपके कहे हुए तत्त्वों की शंका न हो, आपके बताये हुए मार्ग में अहोरात्र मैं रहूँ, यही मेरी आकांक्षा और वृत्ति हो!

भगवान से क्या माँगा सो कहते हैं। एक पलके लिये भी तुम्हारे द्वारा कथित तत्त्व में शंका न हो। तुम्हारे बताये रास्ते पर मैं अहोरात्र रहूँ। निःशंकता सम्यक्त्व का प्रथम गुण है. एक पल मात्र भी शंका हो तो सब

बिगाड़ डालता है, गाढ़ कर्म बाँध लेता है। शंका संतापकारी है। शंकारहित सम्यक्दृष्टि को रात-दिन पुरुषार्थ जाग्रत रहता है, रात-दिन आत्मा में वृत्ति लगी रहती है। इस प्रकार मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति करूँ यही माँगा है। पुष्पमाला में दो प्रकार के कर्त्तव्य बताये हैं—भक्तिकर्त्तव्य और धर्मकर्त्तव्य। सत्पुरुष की आज्ञा से स्तुति, नित्यनियम, स्वाध्याय आदि करना भक्ति है और इसे करते हुए जो आत्महित के विचार आवें, कषाय की मन्दता हो, आत्मा के परिणाम स्थिर हो वह धर्म है। प्रारम्भ में भक्ति मुख्य है। उसका परिणाम धर्म है। यह आगे चलकर समझ में आता है। देह के लिये अन्य कार्यों में प्रवृत्ति करनी पड़ती है तब और रात्रि में सोते समय भी भावना तो आत्मार्थ करने की ही रहे, ऐसा लक्ष्य रखना चाहिये। इस प्रकार दिन में तथा रात्रि में भगवान की आज्ञा में, धर्मध्यान में प्रवृत्ति हो, यही मेरी आकांक्षा और वृत्ति हो। तात्पर्य यह कि मेरी सर्व इच्छा और प्रवृत्ति मोक्ष के लिये ही हो।

हे सर्वज्ञ भगवन् ! आपसे मैं विशेष क्या कहूं? आपसे कुछ अज्ञात नहीं है। मात्र पश्चात्ताप से कर्मजन्य पापकी क्षमा चाहता हूँ।

हे भगवन् ! आप सर्वज्ञ है, इसलिये सभी कुछ जानते हैं। मेरे सत्ता में रहे हुए कर्मों को भी जानते हैं। मैं अल्पज्ञ आपको क्या कहूँ? मेरे कर्मजन्य पापों का क्षय हो और पुनः वैसे कर्म न बँधे ऐसी समता, क्षमा एवं धीरज रहे, बस यही चाहता हूँ।

ॐ शान्ति : शान्ति : शान्ति :

मेरे आत्मा का कल्याण हो, कल्याण हो, कल्याण हो, इस भावना के साथ विराम लेता हूँ। समस्त विभाव परिणाम से थकना, निवृत्त होना शान्ति है। उससे अवश्य कल्याण होता है।

(नित्य नियमादि पाठ से)

उसके मुख से इस प्रकार परिचय पाकर मंत्री ने राजा को उसका सारा परिचय कह सुनाया। सुनकर राजा मंत्रियों समेत बड़ा दुःखी हुआ। वह कहने लगा मैं ऐसे जुआरी को अपनी ऐसी सुशील कन्या कैसे दे सकता हूँ? अगर दे भी दूं तो देश-परदेश में मेरा क्या महत्व रहेगा? यश के बदले में मुझे अपयश का भागी बनना पड़ेगा। दूसरी बात यह है, कि अगर मैं अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार इसको कन्या नहीं देता हूँ, तो मेरा वचन भंग होता है, और वचन-भंग होना मुझ सरीखों के लिये बड़े कलंक की बात है। अतःप्राणों की, राज्य की और धन की वचन-रक्षा के समक्ष कोई कीमत नहीं है? इस प्रकार अपने मन में संकल्प-विकल्प करता हुआ राजा अन्तःपुर में जा पहुँचा। वहां पर खूब धूमधाम से नाच-गान के साथ उत्सव मनाया जा रहा था। राजा के मुख को मलिन देख सुलोचना ने अपने पिता से पूछा, पिताजी ! आज खुशी के अवसर पर आपके चेहरे पर श्यामता क्यों झलक रही है?

यह सुन राजा ने उसका वृत्तान्त रानी को आदि से अन्त तक कह सुनाया और बोला, मेरे उदास होने का यही कारण है। इसी बीच में पुत्री बोल उठी पिताजी! यह आप व्यर्थ का सोच कर रहे हैं। वह पुरुष जिसके विषय में आप ऐसा वैसा कह रहे हैं, वह वैसा नहीं है। वह बड़ा ही विचित्र, गुणशाली और शूरवीर है। जो कुछ मंत्रियों को कहा गया है, वह तो केवल उनकी वाणी का वैचित्र्य है। इसके बाद उस राजकुमारी ने जो-जो बातें परदे के भीतर देखी थीं, उन सबको अपने पिता से कह सुनाई।

इसके पश्चात् सुलोचना ने पिता से कहा, पिताजी ! यही श्रीचन्द्र मेरा पति होगा।

अंगूठी से मुझे इनका नाम ज्ञात हुआ है, अपने पिता का नाम और निवास स्थान इन्होंने अपने मुँह से साफ-साफ बतला दिया है। अब इसके आगे आप क्या जानना चाहते हैं?

पुत्री के इस प्रकार के आश्वासन भरे वचनों को सुनकर राजा के जी में जी आया, और उसने प्रसन्न होकर ज्योतिषी से लग्न निकलवाया। इसके बाद उसने श्रीचन्द्र को लिवालाने के लिये मंत्रियों को भेजा।

मंत्रियों ने शीघ्र ही लौटकर राजा से निवेदन किया कि महाराज! न मालूम श्रीचन्द्र कहां चला गया। उसे इधर उधर बहुत देखा भाला मगर वह कहीं दिखाई न दिया।

यह सुन राजा बहुत व्याकुल हुआ, और उसने अपने सिपाहियों को उसे खोजने के लिये भेजा। उन्होंने राजमहल, नगर और बाहरी उद्यान आदि सभी ढूंढ मारे, परन्तु उसका कहीं पता न चला। जब यह बात सुलोचना को मालुम हुई तो वह लड़खड़ा कर भूमि पर गिर पड़ी, और बेहोश हो गयी। माता-पिता और दास दासियां द्वारा तरह तरह के उपचार किये जाने पर उसे कुछ होश हुआ। वह रो रोकर पृथ्वी पर नीर विहीन मीन की तरह छटपटाने लगी। वह अपने अर्तनाद से दूसरों को भी रूलाने लगी। सारी रात्रि उसकी इसी प्रकार बीती। उसने उसके वियोग में खाना-पीना और बोलना सभी छोड़ दिया। यह देख सभी ने उसका अनुसरण किया। राज-परिवार की ऐसी अवस्था देख मंत्री किं-कर्त्तव्य मूढ़ हो गये।

राजा ने पुरवासियों को बुलाकर पूछा कि, क्या कोई यहां पर कुशस्थल से आया हुआ व्यक्ति है?

यह सुनकर उपस्थित जनता में से बहुतेरे व्यक्तियों ने एक साथ उत्तर दिया, राजन् कुशस्थल के यहां पर अनेकों व्यक्ति हैं। कहियें आप किसे पूछते हैं ?

राजा द्वारा उसके नाम और निवास स्थान आदि के बतलाने पर एक सेठ ने कहा, महाराज! कुशस्थल में लक्ष्मीदत्त का पुत्र जो श्रीचन्द्र है, वह मेरे स्वामी का जमाई है। जैसी अंगूठी का निशान आप बताते हैं वैसी अंगूठी उसी के हाथ में शोभायमान है। कुशस्थल निवासी धन नामक सेठ का मैं व्यापारी-सेवक हूँ। वह कुमार धन नामक सेठ की धनवती नामक पुत्री का पति है।

उसे व्यापारी-सेवक द्वारा बतलाये हुए चिन्हों से कुमारी ने यह निश्चय कर लिया कि वही मेरा पति श्रीचन्द्र है।

इसके पश्चात् राजा ने राजकुमारी को समझा बुझा कर भोजन करवाया और कहा कि पुत्री! अब किसी प्रकार का शोक मत करो तुम्हारे पति का पता लग गया है। हम शीघ्र ही राजधिराज प्रतापसिंह के पास हमारे नगर के माननीय व्यापारियों और सुयोग्य मंत्रियों को भेज रहे हैं, जो जाकर

इस विषय में उनसे प्रार्थना करके श्रीचन्द्र को यहां विवाह के लिये राजा के आदेश से लौटा लावेंगे। तुम किसी प्रकार से दुःखी मत हो।

इधर मंत्रियों के नाम धाम आदि पूछ कर चले जाने के बाद कुमार शौचादि कार्य से निपटने का बहाना कर वहां से चल दिया। कुछ दूर आगे जाकर उसने अपने कार्पटिक वेष को किसी दूसरे को दे दिया, और स्वयं ब्रह्मचारी का वेष बनाकर क्रम से उस देश का त्याग करके एक बड़े भारी जंगल में जा पहुँचा।

जल जीवन-रस रूप है, जल बिन नीरस जान।
नीरस जन संसार में, मानों मृतक-समान।।

मानव जीवन एक जलका बुलबुला मात्र है। जल को पण्डितों ने जीवन भी कहा है, रस भी कहा हे। रसमय जीवन ही जीवन है, अगर रस न रहा तो, जीवन जीवन नहीं रहता। जिसके जीवन में जीवन नहीं है तो उसका जिन्दा रहना भी भूमि को भारी करने के सिवाय कुछ नहीं है। इसी लिये ज्ञानी पुरुष जीवन में रसधारा को बहाते रहते हैं। पूर्व जन्म की पुण्य तपश्चर्या से वर्तमान जीवन में वह आलौकिक रसकी धारा बहाता हुआ, अपना और दूसरों का समय आनंद से बिताता था।

महेन्द्रपुर की राजकुमारी की आंखें खोल कर, उसमें रस पैदा करके श्रीचन्द्र ने आगे का रास्ता लिया। चलते हुए किसी एक जंगल में वह पहुँच गया। पुण्यवान्-पुरुषों के लिये जंगल में भी मंगल हो जाता है, पुण्य-लीला करता हुआ कुमार श्रीचन्द्र जंगल में एक सुन्दर सरोवर देखता है।

सरोवर में मोती के समान निर्मल-पानी पर कमल खिल रहे थे। चकवे, सारस, और हंस उसमें कूज रहे थे। किनारे पर हरे भरे वृक्षों के उन्नत शिखरों पर मयूरों के नाच हो रहे थे। इस दृश्य को देखकर कुमार की इच्छा हुई कि इन पक्षियों के बीच जाकर इस सरोवर में जलक्रीड़ा करे। उसने कपड़े उतारे, और स्वयं पानी में उतर गया। वह जल क्रीड़ा में इतना लीन हो गया कि उन जलचर पक्षियों के बीच अपना अस्तित्व भी भूल गया। उसने खूब ही तैराकी की ओर खूब ही गोते लगाए, तथा खूब छक कर नहाया। जब जलक्रीडा से उसका जी भर गया, तो वह बाहर निकला, कपड़े पहने, और सरोवर की शोभा को निरखता हुआ उसके किनारे किनारे चला।

चलते चलते उसे एक उद्यान सा दिखाई पड़ा। वहां पर उसने एक ओर तो आश्रम, दूसरी ओर हाथी घोड़े, और तीसरी तरफ कई मनुष्यों को

और चित्र विचित्र वेषधारिणी स्त्रियों को देखकर, विचार किया-न तो ये कार्पटिक मालुम पड़ते हैं न कोई योगी और न ही तपस्वी। तो फिर ये कौन हैं? उफ्! इस संकल्प-विकल्प से क्या फायदा? इसका पता वहां जाकर ही क्यों न लगा लूं?

इतना सोचने के पश्चात् वह उसी उद्यान के समान आम्रवन में जा घुसा। वहां पर उसने एक अद्भुत क्रान्तिमान तापस कुमार को देखा, जो कि चन्द्रमा के समान कान्तिवाला, वल्कल के वस्त्र पहने हुए, पैरों में मोरपंख की चट्टी पहने हुए, पेड़ की शाखा में बंधे हुए झूले पर झूल रहा था। वह तापस कुमार सोने के आभरणों से अलंकृत था। उसके अंग भी कोमल प्रतीत होते थे। उसके पास ही किसी तापस कुमारी को भी इधर-उधर आते जाते देख कुमार बड़ा ही विस्मित हुआ।

कुमार कुछ आगे बढ़ा तो उस तापस कुमार की दृष्टि कुमार पर पड़ी। कुमार के रूप से आकर्षित होकर उसने पास खड़ी हुई बालिका से कहा—सखी! यह आगन्तुक हमारा अतिथि है अतः फल-फूलों से इनका सत्कार करो।

आज्ञा पाते ही उस सखी ने आदर पूर्वक कहा— हे ब्रह्मचारी! आओ। इस पेड़ की सघन छाया में विश्राम करो। आपको आगे कहां जाना है? कृपा करके हमारा आतिथ्य ग्रहण करो।

यह सुनकर कुमार राजादनी खिरनी—रायण के वृक्ष के नीचे जाकर बैठ गया। सखी ने खूब फल-फूल कुमार को लाकर दिये और कुमार ने बड़ी प्रसन्नता से उन स्वादिष्ट फलों को खाया।

कुमार उनसे उनका परिचय पूछने ही वाला था कि एक अन्य रमणी वहां पर गाती हुई आई :-

चन्दकला रायसुआ, सा सव्व कलाणभायणं जयइ।
सिरिचंद वरो जीए, सयमेव परिक्खिऊण कओ।।

यह सुनकर कुमार को बड़ा अचंभा हुआ और वह विचार करने लगा—कहां तो चन्द्रकला है और कहां ये रहते हैं? कहां तो वह स्थान, और कहां इतनी दूर यह स्थान? इन सब बातों को ये कैसे जानती हैं।

इस प्रकार वह विचार कर ही रहा था, कि एक बुढ़िया निर्मल वस्त्र धारण किये हए वहां आ पहँची। वह अपनी पोशाक से विधवा जान पडती

थी। उसने आकर उस नरवेशधारी तपस्वी कुमार को नारी की पोशाक प्रदान की।

छाया में सुखपूर्वक बैठे हुए उस बटु कुमार को देखकर उस बुढ़िया ने पूछा–भाई! तुम कहां से आये हो? मैं कुशस्थलपुर से आ रहा हूँ। बटु ने उत्तर दिया। यह बात सुनकर सब बड़ी प्रसन्न हुई, और उन्होंने आकर कुमार को घेर कर बैठ गई और पूछने लगी—

हे भाई ! यह तो बताओ कि क्या वहां चंद्रकला आई है। उसका विवाह किसके साथ हुआ है? बटुक ने उत्तर दियाः— आप इस बात को सत्य समझें कि लक्ष्मीदत्त सेठ का पुत्र चन्द्रकला को ब्याहकर कुशस्थलपुर में लाया है।

इस प्रकार उत्तर पाकर सबने अपनी स्वामिनी से कहा—हे स्वामिनी! सुनो। यह बात कभी मिथ्या नहीं हो सकती।

यह देखकर कुमार ने निश्चय कर लिया कि यही स्त्री इन सब में प्रधान है अतः उसने उसे नमस्कार कर विनय पूर्वक पूछा–हे माताजी! आपका यहां कैसे आगमन हुआ। तापस वेषधारिणी ये दोनों कौन हैं? और ये अवशिष्ट बालाएं भी कौन हैं? मैं सब बातों को जानने के लिए उत्सुक हूँ।

उस वृद्धा ने जवाब दिया–हे पुत्र! सुनो तुम्हारे पूछे अनुसार विस्तार पूर्वक तुम्हें हमारे यहां आने को राम कहानी सुनाती हूं। ध्यान पूर्वक सुनोः-

वसन्तपुर में वीरसेन नाम का राजा राज्य करता था। उसके वीरमती और वीरप्रभा नाम की दो रानियां थीं। उनमें से प्रथम वीरमती से मैं मंगु-नरेश की कन्या हूं। मेरे माता-पिता के दो कन्याएं हुई। उनमें जयश्री बड़ी, तथा मैं छोटी हूँ। पिताजी मुझे विजयवती कहकर पुकारते थे।

मेरी बड़ी बहिन जयश्री का विवाह महाराज प्रतापसिंह के साथ हुआ। उसके जय कुमार-आदि चार पुत्र हुए। वसन्तपुर के राजा का प्रधान मंत्री सदामति मेरा चाचा है।

इधर वसन्तपुर नरेश की दूसरी रानी वीरप्रभा के नरवर्मा नामका एक पुत्र हुआ। वह बड़ा ही बलवान् नीतिज्ञ और शस्त्रास्त्र विद्या में निपुण है।

कुछ समय पश्चात् मेरे भी चन्द्र की कान्ति के समान एक कन्या हुई जिसका नाम बड़े प्यार से मैंने चन्द्रलेखा रखा, यह जो तुम्हारे सामने स्थित है, यह वही मेरी कन्या चन्द्रलेखा है, और दूसरी ये सब इसकी समवयस्क सखियां हैं।

चन्द्रलेखा के बाद मेरे एक पुत्र भी हुआ जिसका नाम वीरवर्मा रखा, जो इस समय पांच वर्ष का है और यह हमारे साथ है।

एक समय राजा ने अपनी आत्मा को कालज्वर से ग्रसित देखकर अपने उत्तराधिकारी वीरवर्मा राजकुमार को अपने विश्वास पात्र मंत्री सदामति को सौंप कर कहा कि–मेरा राज्य इसी होनहार राजकुमार को देना अन्य को नहीं। यही मेरा अन्तिम आदेश है। यह कहकर राजा स्वर्ग सिधार गये।

राजा की मृत्यु के पश्चात् बलगर्वित नरवर्मा ने अन्यायं से हमारा राज्य छीन लिया। हम सबको वहां से निकाल दिया। तब हम सब मेरे पिता के नगर की तरफ रवाना हुए। मार्ग में एक बहुत बड़ा नगर आया। नगर के बाहर हम लोग ठहरे थे। वहां पर हमने सुना कि यहां पर एक बड़ा शकुनज्ञ आया हुआ है यह सुन मन्त्री सदामति नगर में गये, और मानपूर्वक उसे बुलाकर मेरे पास लाये।

मैंने चन्द्रलेखा को उसकी गोद में बिठाकर उसे पूछा हे भाई! ज़रा यह तो बताओ कि इन कन्या का पति कौन होगा, तथा वह कब और–कहां प्राप्त होगा?

कुछ देर विचार करके उसने कहा–बहिन! सुनो। महाराज प्रतापसिंह का पुत्र चन्द्रकला नामकी राजकुमारी के साथ विवाह करलेने के पश्चात् इसका पति बनेगा। इस बात में किसी तरह का सन्देह मत करो। आप सब लोग खदिर वन में चले जाओ। आपको वह व्यक्ति वहीं मिलेगा। वहां पर राजदनी-वृक्ष के नीचे आकर बैठते ही वह वृक्ष दूध बरसाने लगेगा। इससे आप लोग चन्द्रलेखा के भावी पति को सहज में ही पहचान पावेंगे।

उसके द्वारा लिए श्लोक पत्र को और उसके बचनों को स्वीकार, करके तथा यथायोग्य उसका सत्कार करके हम लोग अपने परिवार के साथ इस खदिर वन में चलें आये हैं। यहां आकर हमने दो मनुष्यों को योगी का वेश पहनाकर कन्या के वर की खोज में कुशस्थलपुर भेजा था। वे वहां जाकर यहां पर वापस लौट आये हैं। उन्होंने वास्तविक बात का पता लगा लिया है, और तुम्हारे वचन भी उस बात से मेल खाते हैं।

सेठ का पुत्र श्रीचन्द्रही उस चन्द्रकला का पति बना है न कि निमित्तये के कथानानुसार महाराज प्रताप सिंह का पुत्र श्रीचन्द्र।

यह मेरी पुत्री चन्द्रलेखा यहां पर अपनी स्वेच्छा से कभी अपने वेष में और कभी पुरुष वेष में, नाना प्रकार के खेल खेलती हुई अपनी प्यारी सखियों के साथ क्रीड़ा करती है। अनेकों प्रकार के नृत्य करती है, और फूलों के आभरणों से अपने को सजाती है। यह हमारी स्थिति है।

इस प्रकार की बातें सुनने पर कुमार ने सोचा कि-यहां पर ज्यादा देर तक ठहरना उचित नहीं। अतः वह रवाना होने के लिये ज्योंही उठा त्यों ही अचानक राजादनी (खिरणी-रायण के) वृक्ष ने उस पर बहुत सा दूध बरसाया। वह दृश्य ऐसा मालुम होता था मानो बहुत दिनों से बिछुड़े हुए पुत्र को गोदी में पाकर माता, अपने हर्ष के आंसुओं से उसे नहला रही हो। या दूध पिला रही हो।

यह घटना देखकर सभी साश्चर्य प्रसन्न हुए और एक साथ बोल उठे-जिस वर की खोज में हम इतने दिनों से परेशान थे वह वर आज अपने आप अतर्कित भाव से ही मिल गया! मिल गया !! मिल गया !!!

यह बात सुनते ही चन्द्रलेखा ने अपना सर लज्जा से झुका लिया, और माता की आज्ञा पाकर शीघ्र ही कुमार के गले में वरमाला डाल दी। उस समय पत्तों ने हिल कर, कलियों ने मुस्करा कर, और पेड़ों ने फल फूलों की वर्षा करके कुमार का स्वागत किया। कन्या पक्ष वालों ने भी नाना प्रकार से कुमार का खूब आदर सत्कार किया।

उनके द्वारा आग्रह पूर्वक पूछने पर कुमार ने अपना ठीक-ठीक परिचय दे दिया। उनके वचनों को सादर मानते हुए कुमार ने राजकुमारी चन्द्रलेखा के साथ पाणिग्रहण कर लिया। कर-मोचन के अवसर पर उसे विष को दूर करने वाली कई मणियां तथा अन्य बहुत सी बहुमूल्य वस्तुएं प्राप्त हुई। तत्पश्चात् वीरमती ने अपने पंचवर्षीय पुत्र को कुमार की गोदी में बिठाकर कहा-हे उदारता और वीरता में अद्वितीय महापुरुष! इस वीरवर्मा को आप जैसा बना देंगे, वैसा ही यह वन जायेगा। अतः आप इसे अपने साथ रखकर मेरी इतनी बात मानने की कृपा करें।

कुमार ने उत्तर में कहा-माता जी! आप अधीर न होइए, सब अच्छा ही होगा।

इस प्रकार अपनी सास को आश्वासन देकर कुमार ने मंत्री की ओर दृष्टि घुमाई और बोला-मंत्रिवर्य! आप इन सबको साथ लेकर कुण्डलपुर

चले जाइए। लीजियें यह पत्र वहां के मंत्रियों को दे दीजियेगा वहां पर आप लोगों को किसी प्रकार की तकलीफ नहीं होगी। वहां आप सुख पूर्वक रहिएगा। इस समय मैं कुछ आगे जाऊंगा नहीं तो मैं भी आपके साथ ही चलता। आप किसी भी प्रकार की चिन्ता न करे। कुछ समय पश्चात् आपका और मेरा मिलाप वहां हो जायगा। इस प्रकार सबको सान्त्वना देकर, तथा उन सबसे विदा माँग कर कुमार अपने पूर्ववेश को धारण कर वहाँ से रवाना हुआ और एक दूसरे देश में जा पहुँचा।

इधर वीरमती अपनी पुत्री और मंत्री आदि परिवार के साथ उस खदिर वन से चन्द्रपुर की ओर चल पड़ी। चलते-चलते महेन्द्रपुर में जा पहुँचे। जब यह बात वहां के राजा को मालुम हुई तो उसने वीरमती को एवं उनके परिवार को अपने यहां आदर के साथ निमंत्रित किया। परस्पर एक दूसरे ने परिचय प्राप्त किया। राजा आदि सब प्रसन्न हुए। महेन्द्रपुर की रानी और वीरमती आपस में धर्म की बहनें बन गईं। उसी रोज कुशस्थलपुर से कुण्डलपुर होता हुआ कोई बंदीजन वहां आया। उसने कुमार श्रीचन्द्र के लोकोत्तर चरित्र का गान किया। सुलोचना और चन्द्रलेखा बहुत प्रसन्न हुई मानों प्यासे पपीहे को स्वाति की बूंदे मिल गईं हों। उन्होंने उस बंदी को भारी पारितोषिक देकर आदर से विदा किया।

कुछ दिन ठहरकर सुलोचना और उसकी माता से कुण्डलपुर के लिए वीरमती ने आज्ञा ली और अपने परिवार के साथ कुछ ही दिनों में कुण्डलपुर जा पहुँची।

जस जीवन अपजस मरन, सुनो सयाना लोय।
ज्ञानीजन संसार में, दाखें मारग दोय।।

जो मनुष्य यश को रखते हुए जीते हैं उनका जीना जीना है। अपयश के हो जाने पर जीना जीना न रहकर मरना हो जाता है। अपने जीवन के बहुमूल्य समय को जो मनुष्य परोपकार में बिताते हैं उन पुरुषों का नाम इतिहास के उज्ज्वल पृष्ठों पर सुवर्णाक्षरों से लिखा जाता है। यशस्वी पुरुष मरकर के भी अमर हो जाते हैं। ऐसे अमर पुरुषों के जीवन संदेश जनता को अमरता का पाठ पढ़ाते हैं।

हमारा चरित्र-नायक यशस्वी कुमार श्रीचन्द्र अपने भाग्य की परीक्षा के लिए अपने जीवन से जगत को आलोकित करता हुआ एक दिन, किसी

नगर की बाहरी भूमि को रथों, घोड़ों, तम्बुओं, सुन्दर वेषधारण किए हुए मनुष्यों और फौजी पोशाक पहने हुए सिपाहियों से व्याप्त देखकर किसी एक पुरुष से पूछा सखे! यहाँ क्या हो रहा है? उसने उत्तर देते हुए कहा– ब्रह्मचारी! सुनो यह काम्पिल्य नगर है। यहां के अधिपति महाराज जितशत्रु हैं। उनके प्रीतिमती नाम की महारानी है। उनका कनकरथ नामक कुमार यहाँ पर अपने दोस्तों के साथ राधावेध की नकल करेगा उसी के लिए यह सारा समारोह है।

प्रसिद्ध गायनाचार्य वीणारव ने एक दिन राजसभा में राधावेध की साधना करने वाले किसी श्रीचन्द्र नाम के एक लोकोत्तर पुरुष का चरित्र सुनाया था। जिस प्रकार तिलकपुर में राधावेध सम्पन्न हुआ था, उसी का अनुकरण करते हुए यहाँ नाटक खेला जा रहा है।

आइयें, देखियें यह मण्डप है। ये राजाओं के शिविर हैं। ये राजकुमार हैं। यह स्तम्भ है। यह राधा है। यह तेल का कड़ाह है। नारीवेषधारी यह पुरुष तिलक मंजरी है। पालकियों में चढ़ी हुई ये राजकुमारियां हैं। सामने धनुष-वाण रखा है। देखिए! ध्यान से देखियें, राधावेध साधने के लिये बड़ी-बड़ी उमंगों को लेकर राजकुमार स्तम्भ के पास आते हैं। असफल होकर, निराशा और अपमान को अपने हृदय में लेकर ये लौट जाते हैं। देखिये, यह श्रीचन्द्र का वेष बनाकर कुमार कनकरथ आया है। देखिये इसने श्रीचन्द्र की तरह बाण चला दिया है। बाण लगा ही नहीं तब भी उस कृत्रिम तिलक मंजरी ने उसके गले में वरमाला डाल दी है। अहा हा हा! कितना सुन्दर नाटक है। ये भाट चारण–सूरो सिरि चंदो जयउ कहकर आशीर्वाद के साथ प्रशंसा के गीत गाते हैं। इस प्रकार नाटक-दिखानेवाले पुरुष को कुमार ने प्रसन्न होकर बहुत सा पारितोषिक प्रदान किया।

नाटक देखकर मन ही मन कुमार प्रसन्नता का अनुभव करता हुआ खड़ा था। उस समय पास में खड़ी हुई राजकुमारी कनकवती समुद्र के प्रति नदी के समान प्रेम से नाटकीय कुमार श्रीचन्द्र के प्रति उमड़ रही थी। उसने पास खड़ी अपनी धामाता के सामने लज्जा और संकोच को छोड़कर यह बात प्रकट कर दी। अहा! कितना सुन्दर स्वरूप है। महामहिम इस उदार शूरवीर, धीर और गंभीर पुरुष को मैंने मेरा जीवन–साथी मान लिया है। आज से यही मेरे पति हैं। वहां खड़ी मंत्री की कन्या प्रेमवती, सार्थपति की

कन्या धनश्री ने और नगर सेठ की पुत्री हेमश्री ने भी राजकुमारी कनकवती की बात के साथ उसी प्रकार अपनें मनोगत भावों को भी व्यक्त किया और कहा कि–जिस महापुरुष की छाया भी ऐसी मनोहर तो साक्षात् स्वरूप का तो कहना ही क्या ?

धाय माता ने उन सखियों के विचारों की प्रसंशा की और कहा कि- मैं राजाजी से सलाह करके अपने मंत्रियों को कुशस्थलपुर भेजकर, विवाह के लिए कुमार श्रीचन्द्र को आमंत्रित करवा दूंगी। कुमार ने इन सारे विचारों को सुनकर अपने मन में विचार किया यदि मैं यहां कुछ देर और ठहरा तो मुझे यहां कोई न कोई अवश्य पहचान लेगा, इसलिये अब यहां से चल देना चाहिये। यह सोचकर वह वहां से आगे को चला। बहुत सा मार्ग तय करने पर उसे दूर से एक और नगरी दिखाई दी। विश्राम की इच्छा से उसने पास ही के एक यक्ष-मंदिर में प्रवेश किया। वहां पहले से ही सिर पर हाथ धरे कोई चिंतातुर व्यक्ति बैठा था। उसे देखकर कुमार ने पूछा भाई तुम कौन हो इस नगरी का क्या नाम है? और तुम इतने चिन्तातुर क्यों दिखाई देते हो।

उसने एक लम्बी सांस लेकर कहा–पथिक! यह कान्ति नाम की नगरी है। महाराज नरसिंह देव इसके शासक हैं। सब कलाओं में निपुण, रूपवती, विदुषी प्रियंगुमंजरी नाम की उनके एक पुत्री है। अब आप चिंता का कारण भी सुन लो—

यहाँ से नैऋत्य कोण में हेमपुर नाम का नगर है। वहां मकरध्वज नामका राजा राज्य करता है। उसके मदनपाल नाम का एक पुत्र है। वह युवावस्था में एक दिन अपने गवाक्ष में बैठा चौराहे की छटा को निहार रहा था। इतने में उसने एक योगिनी को जाते हुए देखा। उसने उसे अपने पास बुलाकर पूछा माई! कहां से आई हो? और कहां जाती हो कोई आश्चर्य की घटना हो तो सुनाओ।

योगिनी ने कहा–मैं कांतिनगरी से आती हूँ। कुशस्थलपुर की तरफ जा रही हूँ। मैं एक अपूर्व दृश्य तुम्हें दिखाती हूँ। इसे तुम देखो–ऐसा कह कर उसने किसी स्त्री का नेत्र हारी चित्र दिखलाया।

क्रमशः

BOYD SMITHS PVT. LTD.
8, Netaji Subhas Road
B-3/5 Gillander House, Kolkata - 700 001
Ph: (O) 2220-8105/2139,(Resi) 2329-0629/0319

NAHAR
5/1, A.J.C. Bose Road, Kolkata - 700 020
Ph: (O) 2247-6874, (Resi) 2246-7707

KUMAR CHANDRA SINGH DUDHORIA
Azimganj House
7, Camac Street, Kolkata - 700 017
Ph: 2282-5234/0329

ARIHANT JEWELLERS
Shri Mahendra Singh Nahata
M/s BB Enterprises
8A, Metro Palaza, 8th Floor 1,Ho Chi Minh Sarani,
Kolkata - 700 071
Ph: 2288 1565 / 1603

CREATIVE LIMITED
12, Dargah Road, Post Box:16127,
Kolkata -700 017
Ph: (033) 2240-3758/1690/3450/0514
Fax: (033) 2240 0098, 2247 1833

IN THE MEMORY OF SOHANRAJ SINGHVI
VINAYMATI SINGHVI
93/4 Karaya Road, Kolkata - 700 019
Ph: (O) 2220 8967, (Resi) 2247 1750

MAHASINGH RAI MEGH RAJ BAHADUR
Goalpara, Assam

RATAN LAL DUNGARIA
16B, Ashutosh Mukherjee Road
Kolkata - 700 020, Ph: (Resi) 2455-3586

M/S. METROPOLITAN BOOK COMPANY
93, Park Street, Kolkata - 700 016
Ph: 2226-2418, (Resi) 2475-2730, 2476-8730

GAUTAM TRADING CORPORATION
32, Ezra Street, Kolkata - 700 001
6th Floor, Room No - 654
Ph: (O) 2235 0623, (Resi) 2239-6823

TARUN TEXTILES (P) LTD.
203/1, Mahatma Gandhi Road,
Kolkata - 700 007
Ph: 2238-8677/1647, 2239-6097

KESARIA & CO.
Jute Tea Blenders & Packeteers Since 1921
2, Lal Bazar Street, Todi Chambers, 5th Floor
Kolkata - 700 001
Ph: (O) 2348-8576/0669/1242
(Resi) 2225-5514, 2237-8208, 2229-1783

APRAJITA
Air Conditioned Market
Kolkata - 700 071
Ph: (O) 2282-4649, (Resi) 2247-2670

ASHOK KUMAR RAIDANI
6, Temple Street, Kolkata - 700 072
Ph: 2237-4132, 2236-2072

SUDIP KUMAR SINGH DUDHORIA
Indian Silk House Agencies
129, Rasbehari Avenue, Kolkata, Ph: 2464-1186,

SURANA MOTORS PVT. LTD.
84 Parijat, 8th Floor,
24A, Shakespeare Sarani
Kolkata - 700 071
Ph: 2247-7450/5264

PANKAJ NAHATA
Oswal Manufacturers Pvt. Ltd.
Manufacturers & Suppliers of Garments &Hosiery Labels
4, Jagmohan Mallick Lane, Kolkata - 700 007
Ph: (O) 2238-4755, (Resi) 2238-0817

APARAJITA BOYED
Suravee Business Services Pvt. Ltd.
9/10, Sitanath Bose Lane,
Salkia, Howrah - 711 106
Ph: 2665-3666/2272
e-mail: Suravee@cal2.vsnl.net.in
sona@cal3.vsnl.net.in

B.W.M.INTERNATIONAL
Manufacturers & Exporters
Peerkhanpur Road, Bhadohi - 221401 (U.P.)
Ph: (O) 05414-25178, 25779, 25778
Fax: 05414-25378 (U.P.) 0151-202256 (Bikaner)

SAGAR MAL SURESH KUMAR
187, Rabindra Sarani
Kolkata - 700 007
Ph: Gaddy- 2233-1766, 2238-8846
Mobile: 9831028566
Resi : 2355-9641/7196

LALCHAND DHARAMCHAND
Govt. Recognised Export House
12, India Exchange Place, Kolkata-700 001
Ph: (B) 2220-2074/8958 (D) 2220-0983/3187
Cable: SWADHARMI, Fax: (033) 2220 9755
Resi: 2464-3235/1541, Fax: (033) 2464 0547

GLOBE TRAVELS
Contact for better & Friendlier Service
11, Ho Chi Minh Sarani, Kolkata - 700 071
Ph: 2282-8181

SMT. KUSUM KUMARI DOOGAR
C/o Shri P.K. Doogar,
Amil Khata, P.O. Jiaganj, Dist: Murshidabad, Pin- 742123
West Bengal, Phone: 03483-56896

SHRI JAIN SWETAMBER SEVA SAMITI
13, Narayan Prasad Babu Lane
Kolkata - 700 007,
Ph: 2239-1408

AJAY DAGA, AJAY TRADERS
203 /1 M. G. Road, Kolkata - 700 007
Ph: (O) 2238-9356/0950 (Fact). 2557-1697/7059

COMPUTER EXCHANGE
Park Centre' 24 Park Street
Kolkata - 700 016, Ph: 2229-5047/9110

SUNDERLAL DUGAR
R. D. B. Industries Ltd.
Regd. Off: Bikaner Building
8/1 Lal Bazar Street, Kolkata - 700 001
Ph: 2248-5146/6941/3350, Mobile: 9830032021

SURENDRA SINGH BOYED
Sovna Apartment
15/1 Chakrabaria Lane,
Kolkata - 700 026, Phone : 2476-1533

MUSICAL FILMS (P) LTD
9A, Esplanade East
Kolkata - 700 069

ABL INTERNATIONAL LTD.
1, Shakespeare Sarani, Kolkata - 700 071.
Ph: 2282-7615/7617/2726, Gram : Sudera

SHIV KUMAR JAIN
"Mineral House"
27A, Camac Street, Kolkata - 700 016
Phone : (Off) 2247-7880, 2247-8663
(Res) 2247-8128, 2247-9546

PRADIP KUMAR LUNAWAT
P-44 Dr. Sundari Mohan Avenue
Kolkata - 700 014, Phone : 2249-0103

NAKODA METAL
Deals in all kinds of Aluminium
32A Brabourne Road
Kolkata - 700 001 Ph: 2235-2076, 2235-5701

ARBEITS INDIA
8/1, Middleton Road, 8th Floor, Room No.4
Kolkata - 700 071, Ph: 2229 6256/8730/1029
Resi: 2247 6526/6638/22405126
Telex: 2021 2333, ARBI IN, Fax : 2226 0174

DR. NARENDRA L. PARSON & RITA PARSON
18531 Valley Drive
Villa Park, California 92667 U.S.A.
Phone : 714-998-1447714998-2726,
Fax : 7147717607

SPACE & WINGS
Travel Agents
Domestic & International Airlines
Phone : 2242-7806/8835/5852
10, Dr. Rajendra Prasad Sarani (Clive Row)
1st Floor, Kolkata - 700 001 Fax : 2242 8831
P.S.A. Biman Bangladesh Airlines

RAJIB DOOGAR
305, East Tomaras Avenue
Savoy, IL 61874-9495
USA
Phone : 001-217-355-0174/0187
e-mail : doogar@uiuc.edu

SUBHASH & SUVRA KHERA
6116, Prairie Circle
Mississauga LS N5Y2
Canada
Phone : 905-785-1243

M/S. SARAT CHATTERJEE& CO. (VSP) PVT. LTD.
Regd Office 2, Clive Ghat Street, (N. C. Dutta Sarani)
2nd Floor, Room No. 10, Kolkata - 700 001
Ph: 2220-7162, 2261-0540, Fax : (91)(33)2220 6400
e-mail: sccbss@cal2.vsnl.net.in

N. K. JEWELLERS
Valuable Stones, Silver wares
Authorised Dealers: Titan, Timex & H. M. T.
2, Kali Krishna Tagore Street (Opp. Ganesh Talkies)
Kolkata - 700 007 (Phone : 2239-7607)

अ angan
Rajasthan Village Theme Resturant at Swabhumi
89/c, Narkeldanga Main Road, Kolkata - 700 054
Phone : 2359 2031, e-mail : www.jiggis.com

PRITAM ELECTRIC & ELECTRONIC PVT. LTD.
Shop No. G- 136, 22, Rabindra Sarani,
Kolkata - 700 073, Phone : 2236-2210

MAHENDRA TATER
147, M. G. Road
Kolkata - 700 007, Phone : 2227-1857

RABINDRA SINGH NAHAR
40/4A, Chakraberia South, Kolkata - 700 020
Phone : (O) 2244-1309, (R) 2475-7458

जो हिंसात्मक प्रवृत्ति से विलग है,
वही बुद्ध, ज्ञानी हैं
WITH BEST WISHES

VEEKEY ELECTRONICS
Madhur Electronics, 29/1B, Chandani Chowk
3rd floor, Kolkata - 700 013
Ph: 2352-8940/334-4140
(Resi) 2352-8387/9885

MOUJIRAM PANNALAL
Citizen Umbrella
45, Armenian Street, Kolkata - 700 007
Phone : (Shop) 2242-4483/2248-8086,
(O) 2268-1396/30924653
Fax : 2271-2151,

BHEEKAM CHAND DEEP CHAND BHURA
D. C. Group Pvt. Ltd, Sagar Estate, 5th Floor
2, Clive Ghat Street, Kolkata - 700 007
Phone : 2220-5229/5121

ROYAL TOUCH OVERSEAS CORPORATION
47, Pandit Purushottam Roy Street, 2nd Floor,
Kolkata - 700 007, Phone : (033)2230-1329, 2232-1033
Fax : 91-33-2302413

ELECTO PLASTIC PRODUCTS PVT. LTD.
22 Rabindra Sarani, Kolkata - 700 073
Phone : 2236-3028, 2237-4039

KRISHNA JUTE COMPANY
Jute Broker & Dealer
9, India Exchange Place, Kolkata - 700 001
Phone : 2220-0874/9372, 2221-0246

LILY SUKHANI
7, Bright Appartment, 7 Bright Street
Flat No. 7 C., Kolkata - 700 019
Phone : 2287-0448

M/S. SETHIA OIL INDUSTRIES LTD.
Manufactureres of De oiled cakes & Refined oil.
Lucknow Road, PO. Sitapur - 261001 (U.P.)
Phone: 05862/42017/42073

M/S. SHREE SILK STORE
House of :
Banarasi Sarees & Velvet Articles etc.
P-25, Kalakar Street, Jain Katra
Kolkata - 700 007
Phone: 2268 2671, 666 4422

SAROJ DUGAR
Fancy saree, bed covers
34/1J. Ballygunge Circular Road
Kolkata - 700 019, Phone: 2475 1458

M/S. POLY UDYOG
Unipack Industries
Manufacturers & Printers of HM; HDPE,
LD, LLDPE, BOPP PRINTED BAGS.
31-B, Jhowtalla Road
Kolkata - 700 017, Phone: 2247 9277, 2240 2825
Tele Fax: 22402825

M/S. B.C. JAIN JEWELLER'S (PVT.) LTD.
Govt. approved valuer for Jewellery.
Director: Bimal Chand Jain/Vikash Jain/Vivek Jain
39, Burtolla Street, Kolkata - 700 007

DHANDHIA BROS
6/1 Hara Prasad Dey lane, Kolkata - 700 007
Phone: (R) 2239-6241/2950 (O) 2239-0581

M/s. MUKUND JEWELLERS
manufactures of American Diamand
Jewellery, Gold & Silver Goods &
Dealers in imitation Jewellery
P-37A, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Phone: 2232 3876

SHRI MANILAL RAJENDRA KUMAR JAIN (DUSAJ)
Dealers : Diamond, Precious Stones, Semi Stones &
Readymade Ornaments,
Phone: 2237 5869/6476
(Mobile): 98301017091, 9830142191

DEEPAK KUMAR SANDEEP KUMAR NAHATA
Dealers in Diamond
Manufactures of Precious & Semi Precious Ornaments
Burtala, Kolkata - 700 007,
Phone: (G) 2238-0900 (M) 9830094325

BADALIA GEMS PVT. LTD.
BADALIA HOUSE
66/3, Beadon Street, Kolkata - 700 006
Phone: (O) 2554-8999/8997 (R) 2533-9985,
Fax : 033 5548999, e-mail : shashibadalia@usa.net

M/S. BEEKAY VANIJYA PVT. LTD.
City Centre
19, Synagogue Street
5th Floor, Room No. 5342535
Kolkata - 700 001
Phone: 2210-3239, 2232-0144, 2238-7281
Fax: 033-2210-3253 (M) 9831001739
e-mail : bktarfab@satyam.net.in

WHILE PURCHASING HEASIAN, SACKING, YARN AND DECORATIVE FURNISHING FABRICS & OTHER JUTE PRODUCTS, PLEASE INSIST ON QUALITY PRODUCTION.

We are, always ready to meet the Exact type of your requirement.

AUCKLAND INTERNATIONAL LTD.

(UNIT : AUCKLAND JUTE MILLS)

"KANKARIA ESTATE"

6, Little Russel Street,
Kolkata - 700 071

A RECOGNISED EXPORT HOUSE

Cable : SWANAUCK, KOLKATA
Telex : 212396 AUCK IN
Codes : BENTLEY'S SECOND
Phone: 22479921/9720,22402683

Registered Office &
'JUTE MILL' at jagatdal 24-Parganas
BHATPARA 81-2757/2758/2038

ऐसा विश्वास दिल में जमाते चलो
सिद्ध, अरिहन्त को मन में रमाते चलो,
वक्त आयेगा ऐसा कभी न कभी
सिद्धि पायेंगे हम भी कभी न कभी।

KUSUM CHANACHUR

Founder: Late Sikhar Chand Churoria

Our Quality Product of Chanachur.
Anusandhan , Raja,
Rimghim, Picnic,
Subham, Bhaonagari Ghantia,

卐

Manufactured By
M/s. K. C. C. Food Product
Prop. Anil Kumar, Sunil Kumar Churoria
P. O. Azimganj, Pin - 742122
Dist: Murshidabad
Phone: Code: 03483 No.: 53232
Cal. Phone: No.: 033 2230 0432, 2522-1580

28 water supply schemes
315,000 metres of pipelines
110,000 kilowatts of pumping stations
180,000 million litres of treated water
13,000 kilowatts of hydel power plants

(And in place where Columbus would have feared to tread)

SPML

Engineering Life

SUBHASH PROJECTS & MARKETING LIMITED

113 Park street, Kolkata 700 016

Tel : 2229 8228, Fax : 2229 3882, 2245 7562

e-mail : info@subhash.com, website: www.subhash.com

Head Office: 113 Park Street, 3rd floor, South Block, Kolkata-700016 Ph:(033)2229-8228.

Registered Office: Subhash House, F-27/2 Okhla Industrial area, Phase II New Delhi-110 020

Ph: (011) 692 7091-94, Fax (011) 684 6003. Regional Office: 8/2 Ulsoor Road,

Bangalore 560-042 Ph: (080) 559 5508-15, Fax: (080) 559-5580.

Laying pipelines across one of the nation's driest region, braving temparature of 50° C.

Executing the entire water intake and water carrier system including treatment and allied civil works for the mammoth Bakreswar Thermal Power Project.

Bulling the water supply, fire fighting and effluent disposal system with deep pump houses in the waterlogged seashore of Paradip.

Creating the highest head-water supply scheme in a single pumping station in the world at Lunglei in Mizoram-at 880 metres, no less.

Building a floating pumping station on the fierce Brahmaputra.

Ascending 11,000 feet in snow laden Arunachal Pradesh to create an all powerful hydro-electric plant.

Delivering the impossible, on time and perfectly is the hallmark of Subhash Projects and Marketing Limited. Add to that our credo of when you dare, then alone you do. Resulting in a string of acheivements. Under the most arduous of conditions. Fulfilling the most unlikely of dreams.

Using the most advanced technology and equipment, we are known for our innovative solution. Coupled with the financial strength to back our guarantees.

Be it engineering design. Construction work or construction management. Be it environmental, infrastructural, civil and power projects. The truth is we design, build, operate and maintain with equal skill. Moreover, we follow the foolproof Engineering, Procurement and Construction System. Simply put, we are a single point responsibility. A one stop shop.

So, next time, somebody suggests that deserts by definition connote dryness, you recommend he visit us for a lesson in reality.

शस्त्र हिंसा एक से एक बढ़कर है।
किन्तु अशस्त्र अहिंसा से बढ़कर कोई शस्त्र नहीं।
अर्थात् अहिंसा से बढ़कर कोई साधना नहीं है।

THE GANGES MANUFACTURING COMPANY LIMITED

Chatterjee International Centre
33A, Jawaharlal Nehru Road,
6th Floor, Flat No. A-1
Kolkata - 700 071

Phone:

Gram "GANGJUTMIL" 2226-0881
Fax: + 91-33-245-7591 2226-0883
Telex: 021-2101 GANG IN 2226-6283
2226-6953

Mill

BANSBERIA

Dist: HOOGHLY
Pin-712 502
Phone: 2634-6441/2644-6442
Fax: 2634 6287

जैन मत तब से प्रचलित है
जबसे संसार में सृष्टि का आरम्भ हुआ।
मुझे इसमें किसी भी प्रकार की आपत्ति नहीं है
कि जैन धर्म वैदान्तिक दर्शनों से पूर्व का हैं।

Dr. Satish Chandra
Principal Sanskrit College, Kolkata

Estd. Quality Since 1940

BHANSALI

Quality. Innovation. Reliability

BHANSALI UDYOG PVT. LTD.
(Formerly: Laxman Singh Jariwala)
Balwant Jain - Chairman

卐

A - 42, Mayapuri, Phase - 1, New Delhi - 110 064
Phone: 2514-4496, 2513-1086, 2513-2203
Fax: 91-011-5131184
e-mail: laxmanjariwala@gems.vsnl.net.in

With Best Compliments..... ?

MARSON'S LTD

MARSON'S THE ONLY TRANSFORMER MANUFACTURER IN EASTERN INDIA EQUIPPED TO MANUFACTURE 132 KV CLASS TRANSFORMERS

Serving various SEB's Power station, Defence, Coal India, CESC, Railways, Projects Industries since 1957.

Transformers type tested both for Impulse/Short Circuit test for Proven desing time and again.

PRODUCT RANGE

Manufactures of Power and Distribution Transformer
From 25 KVA to 50 MVA upto 132kv lever.
Current Transformer upto 66kv.
Dry type Transformer.
Unit auxiliary and stations service Transformers.

18, PALACE COURT
1, KYD STREET, KOLKATA - 700 016
PHONE: 2229-7346/4553, 2226-3236/4482
CABLE-ELENREP TLX-0214366 MEL-IN
FAX-00-9133-225948/2263236

शुभ कामनाओं सहित —

मनुष्य जीवन में ही सत्य कार्य करने का अवसर उपलब्ध होता है।

अहिंसा अमृत है, हिंसा विष है।

अनाम

—आत्मा नित्य है या अनित्य—

आत्मा की उत्पत्ति नहीं होती इसलिये वह अनादि कहलाता है और उसका नाश नहीं होता है इसलिए वह अविनाशी है। जैसे मिट्टी के घड़े के लिये कहा जाता है कि वह मिट्टी से उत्पन्न होता है और फूट कर मिट्टी में ही मिल जाता है वैसे आत्मा के लिये नहीं कहा जा सकता कि वह कब और कहाँ से उत्पन्न हुआ है। आत्मा की उत्पत्ति का मूल कारण कोई नहीं है इसलिये यह नहीं कहा जा सकता कि वह नष्ट होकर किस में मिल जायेगा।

जो जिससे पैदा होता है वही उसका मूल कारण कहलाता है। घड़े का मूल कारण मिट्टी है परन्तु आत्मा का मूल कोई नहीं है। इसी लिये आत्मा नित्य, अविनाशी, अक्षय आदि नामों से पुकारा जाता है।

जो क्रमशः उत्पन्न होकर बदलता रहता है उसे पर्याय कहते हैं। एक सोने की माला को तोड़कर उसका कड़ा बनाया। माला का नाश हुआ, कड़ा उत्पन्न हुआ, तो भी सोना तो वैसे ही मौजूद है। एकरूप नष्ट होता है और दूसरा उत्पन्न होता इस तरह द्रव्य की अपेक्षा आत्मा नित्य परन्तु पर्याय (रूप) की अपेक्षा अनित्य कही जाती है वास्तव में आत्मा का तो कभी नाश होता ही नहीं।

In

Loving Memory of their parents

Late, Shree Phool chandji Kharad

&

Late, Smt. Narangi Devi Kharad

From :-

M/s Phool Chand Kharad & Sons

21, Kali Krishna Tagore Street

Kolkata - 700 007

Phone : 2233-1609, 2239-8628

M.M. & P.O./W.B./R.N.P.–45/2003
VoL. XXVII. NO. 9. TITTHAYARA December 2003
Registered with the Registrar of Newspapers for India
under No. 30181/77

ज्ञानी वही है जो किसी भी प्राणी की हिंसा न करें। सभी जीव जीना चाहते है मरना कोई नहीं चाहता अतः संसार के त्रस और स्थावर सभी प्राणियों को जाने या अनजाने में न मारना चाहिये, न दूसरों से मरवाना चाहिये, ना ही मन वचन काया से किसी को पीड़ा पहुँचानी चाहिये।

Kamal Singh Rampuria
Rampuria Mansions
17/3 Mukhram Kanoria Road, Howrah
Phone No. : 2666 7212/7225